तंत्र, अध्यात्म और काम

(तांत्रिक-प्रेम विधियों के संबंध में छः प्रवचन)

(Translated from English - Tantra, Spirituality & Sex.)

प्रवचन-क्रम

1. तंत्र और योग 2
2. का अंश, तांत्रिक प्रेम 9
3. काम में समग्र समर्पण 15
4. तांत्रिक काम-क्रीडा की आध्यात्मिकता 18
5. तंत्र के माध्यम से परम संभोग 31
6. तंत्र - सपर्पण का मार्ग 44

तंत्र, अध्यात्म और काम
पहला प्रवचन

तंत्र और योग

प्रश्नः भगवान, पारंपारिक योग और तंत्र में क्या अंतर है? क्या वे दोनों समान हैं?
तंत्र और योग मौलिक रूप से भिन्न हैं। वे एक ही लक्ष्य पर पहुंचते हैं, लेकिन मार्ग केवल अलग-अलग ही नहीं, बल्कि एक दूसरे के विपरीत भी हैं। इसलिए इस बात को ठीक से समझ लेना जरूरी है।
योग की प्रक्रिया तत्त्व-ज्ञान प्रणाली-विज्ञान भी है, योग विधि भी है। योग दर्शन नहीं है। तंत्र की भांति योग भी क्रिया, विधि, उपाय पर आधारित है।
योग में करना होने की ओर ले जाता है, लेकिन विधि भिन्न है। योग में व्यक्ति को संघर्ष करना पड़ता है; वह योद्धा का मार्ग है। तंत्र के मार्ग पर संघर्ष बिल्कुल नहीं है। इसके विपरीत उसे भोगना है, लेकिन होशपूर्वक, बोधपूर्वक। योग होशपूर्वक दमन है, तंत्र होशपूर्वक भोग है।
तंत्र कहता है कि तुम जो भी हो, परम-तत्त्व उसके विपरीत नहीं है। यह विकास है, तुम उस परम तक विकसित हो सकते हो। तुम्हारे और सत्य के बीच कोई विरोध नहीं है। तुम उसके अंश हो, इसलिए प्रकृति के साथ संघर्ष की, तनाव की, विरोध की कोई जरूरत नहीं है। तुम्हें प्रकृति का उपयोग करना है; तुम जो भी हो उसका उपयोग करना है, ताकि तुम उसके पार जा सको।
योग में पार जाने के लिए तुम्हें स्वयं से संघर्ष करना पड़ता है। योग में संसार और मोक्ष, तुम जैसे हो और जो तुम हो सकते हो, दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं। दमन करो, उसे मिटाओ जो तुम होः ताकि तुम वह हो सको जो तुम हो सकते हो। योग में पार जाना मृत्यु है। अपने वास्तविक स्वरूप के जन्म के लिए तुम्हें मरना होगा।
तंत्र की दृष्टि में, योग एक गहरा आत्मघात है। तुम्हें अपने प्राकृतिक रूप, अपने शरीर, अपनी वृत्तियों अपनी इच्छाओं को- सब कुछ को मार देना होगा, नष्ट कर देना होगा। तंत्र कहता है, "तुम जैसे हो, उसे वैसे ही स्वीकार करो।" तंत्र गहरी से गहरी स्वीकृति है। अपने और सत्य के बीच, संसार और निर्वाण के बीच कोई अंतराल मत बनाओ। तंत्र के लिए कोई अंतराल नहीं है, मृत्यु जरूरी नहीं है। तुम्हारे पुनर्जन्म के लिए किसी मृत्यु की जरूरत नहीं है, बल्कि अतिक्रमण की आवश्यकता है। इस अतिक्रमण के लिए स्वयं का उपयोग करना है। उदाहरण के लिए- काम है, सेक्स है। वह बुनियादी ऊर्जा है जिसके माध्यम से तुम पैदा हुए हो। तुम्हारे अस्तित्त्व के, तुम्हारे शरीर के बुनियादी कोश काम के हैं। यही कारण है कि मनुष्य का मन काम के इर्द गिर्द ही घूमता रहता है। योग में इस ऊर्जा से लड़ना अनिवार्य है। वहां लड़कर ही तुम अपने भीतर एक भिन्न केंद्र को निर्मित करते हो। जितना तुम लड़ते हो उतना ही तुम उस भिन्न केंद्र से जुड़ते जाते हो। तब काम तुम्हारा केंद्र नहीं रह जाता। काम से संघर्ष-निश्चित ही होशपूर्वक- तुम्हारे भीतर अस्तित्त्व का एक नया केंद्र निर्मित कर देता है। तब काम तुम्हारी ऊर्जा नहीं रह जाएगा। काम से लड़कर तुम अपनी ही ऊर्जा निर्मित कर लोगे एक अलग प्रकार की ही ऊर्जा, एक अलग प्रकार का अस्तित्त्व-केंद्र पैदा होगा।
तंत्र के लिए, काम-ऊर्जा का उपयोग करो, उससे लड़ो मत। उसे रूपांतरित करो। उसे शत्रु मत समझो, उससे मित्रता बनाओ। वह तुम्हारी ही ऊर्जा है; वह पाप नहीं है, वह बुरी नहीं है। प्रत्येक ऊर्जा तटस्थ है। उसका उपयोग तुम्हारे हित में किया जा सकता है और तुम्हारे विरुद्ध भी किया जा सकता है। तुम उसे अवरोधक भी बना सकते हो और सीढ़ी भी बना सकते हो। उसका उपयोग हो सकता है। सही ढंग से उपयोग करने पर मित्र बन जाती है। गलत उपयोग पर वह तुम्हारी शत्रु हो जाती है। वह दोनों ही नहीं है। ऊर्जा तटस्थ है।

साधारण आदमी जिस तरह यौन का काम का उपयोग करता है वह उसका शत्रु बन जाता है, उसे नष्ट कर देता है, उसकी शक्ति का क्षय करता है। योग की दृष्टि ठीक इसके विपरीत है- साधरण मन के विपरीत। साधारण चित्त अपनी ही वासनाओं से विनष्ट होता जाता है।
इसलिए योग कहता है, "वासना छोड़ो और वासना-शून्य हो जाओ।" वासना से लड़ो और अपने भीतर एक संघटन, इनटेग्रेशन पैदा करो जो वासना रहित हो। तंत्र कहता है, "वासना के प्रति जागो।" उससे संघर्ष मत करो। वासना में पूरी सजगता के साथ प्रवेश करो और जब तुम पूरी होश से वासना में प्रवेश करते हो, तुम उसका अतिक्रमण कर जाते हो। तब तुम उसमें होकर भी उसमें नहीं होते। तुम उसमें से गुजरते हो लेकिन अजनबी बने रहते हो, अछूते रह जाते हो।
योग बहुत अधिक आकर्षित करता है क्योंकि योग साधारण चित्त के बिल्कुल विपरीत है। इसलिए साधारण चित्त योग की भाषा समझ सकता है। तुम यह जानते हो कि किस भांति काम तुम्हें विनष्ट कर रहा है, इसने तुम्हें किस तरह नष्ट कर दिया है, किस तरह तुम इसके इर्द गिर्द गुलामों की भांति, कठपुतलियों की भांति घूमते रहते हो। अपने अनुभव से तुम यह जानते हो। इसलिए जब योग कहता है "इससे संघर्ष करो" तुम तत्काल इस भाषा को समझ जाते हो। यही आकर्षण है, योग का सुगम आकर्षण है।
तंत्र इतनी सरलता से आकर्षित नहीं करता। यह मुश्किल लगता है कि कैसे इच्छा के बिना, उसके द्वारा अभिभूत हुए प्रवेश किया जा सकता है? कामवासना में पूरी होश से किस प्रकार प्रवृत्त हुआ जा सकता है? साधरण चित्त भयभीत हो जाता है। यह खतरनाक लगता है, ऐसा नहीं कि यह खतरनाक है। जो कुछ भी तुम काम के संबंध में जानते हो, वह तुम्हारे लिए खतरा उत्पन्न करता है। तुम अपने को जानते हो, तुम जानते हो कि तुम किस प्रकार स्वयं को धोखा दे सकते हो। तुम भलीभांति जानते हो कि तुम्हारा मन चालाक है। तुम वासना में काम वासना में सभी वासनाओं में प्रवृत्त हो सकते हो, और अपने को धोखा दे सकते हो कि तुम पूरी होश के साथ उसमें प्रवृत हो रहे हो। यही कारण है कि तुम्हें खतरे का अहसास होता है। खतरा तंत्र में नहीं है, तुम में है, तुम में है।
और योग का आकर्षण भी तुम्हारे कारण है। तुम्हारे साधारण मन, तुम्हारा काम-दमित, काम का भूखा कामांध चित्त इसका कारण है। क्योंकि साधारण मन काम के संबंध में स्वस्थ नहीं है, इसलिए योग के लिए आकर्षण है। एक बेहतर मनुष्यता जिसका काम के प्रति स्वस्थ, नैसर्गिक, सहज स्वाभाविक दृष्टिकोण होगा... हम सामान्य और प्रकृत नहीं है। हम सर्वथा असामान्य हैं, अस्वस्थ और विक्षिप्त हैं। लेकिन, क्योंकि सभी हम जैसे हैं, इसलिए हमें इसका अहसास नहीं होता। पागलपन इतना सामान्य है कि शायद पागल न होना असामान्य प्रतीत होता है। हमारे बीच एक बुद्ध असामान्य हैं, एक जीसस असामान्य है। वे इमसे अन्यथा मालूम होते है। यह सामान्यता, एक रोग है। इसी सामान्य चित्त में योग का आकर्षण पैदा होता है।
यदि काम को उसकी स्वाभाविकता से ग्रहण करो, यदि उसके गिर्द पक्ष या विपक्ष का कोई दर्शनशास्त्र न खड़े करो, ऐसे ही देखो जैसे अपने हाथ-पांव को देखते हो, एक स्वाभाविक चीज की तरह उसे उसकी समग्रता से स्वीकार करो, तन तंत्र आकर्षित करेगा, और तभी केवल तंत्र ही बहुत से लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।
लेकिन तंत्र के दिन आ रहे हैं। देर-अबेर पहली बार जन-साधारण में तंत्र का विस्फोट होने वाला है। पहली बार जमाना परिपक्व हुआ है- काम को प्राकृतिक रूप में ग्रहण करने के लिए परिपक्व। और संभव है कि यह विस्फोट पहले पश्चिम में हो, क्योंकि फ्रायड, जुंग और रेख ने पृष्ठभूमि तैयार कर दी है। उन्हें तंत्र के बारे में कुछ पता नहीं था, लेकिन उन्होंने तंत्र के विकास के लिए बुनियादी भूमि तैयार कर दी है।
पाश्चात्य मनोविज्ञान इस निष्कर्ष पर पहुंच गया है कि मनुष्य की बुनियादी बीमारी कहीं न कहीं काम से संबंधित है, उसका बुनियादी पागलपन काम-

3

केंद्रित। इसलिए जब तक मनुष्य काम-अभिमुख है, वह स्वाभाविक, सामान्य नहीं हो सकता। काम के प्रति अपनी इस मनोवृत्ति के कारण ही मनुष्य गलत हो गया है। किसी भी भाव या विचार की जरूरत नहीं है और तभी तुम स्वाभाविक हो सकते हो। अपनी आंखों के बारे में तुम्हारा क्या विचार है? क्या वे दुष्ट हैं या दिव्य? क्या तुम अपनी आंखों के पक्ष में हो या विपक्ष में? कोई भी पक्षपात नहीं। इसीलिए तुम्हारी आंखें सामान्य हैं। कोई भी रवैया अपना लो, सोचों कि आंखें बुरी हैं, तब उनसे देखना मुश्किल हो जाएगा। तब देखना किसी समस्या का रूप ले लेगा, जैसे अभी काम है, यान है। तब तुम देखना चाहोगे। तुम देखने की इच्छा करोगे, देखने के लिए व्यग्र हो जाओगे। लेकिन जब तुम देखोगे, स्वयं को अपराधी समझोगे; जब भी देखोगे लगेगा कि कुछ गलत हो गया है। कुछ पाप हो गया है। और तब तुम दृष्टि के यंत्र को ही नष्ट कर देना चाहोगे; आंखों को ही नष्ट कर देना चाहोगे। और जितना ही नष्ट करना चाहोगे, उतना ही तुम आंख-केंद्रित हो जाओगे। तब एक विसंगति उत्पन्न होगी, तुम ज्यादा से ज्यादा देखना भी चाहोगे और ज्यादा से ज्यादा अपराधी भी अनुभव करोगे।
काम-केंद्र के साथ भी यही दुर्घटना घटी है।
तंत्र कहता है, "तुम जो भी हो उसे स्वीकार करो। यही मूलस्वर है।" समग्र स्वीकार और केवल समग्र स्वीकार के माध्यम से ही तुम विकास कर सकते हो। तब उस ऊर्जा का उपयोग करो जो तुम्हारे पास है। पर उसका उपयोग कैसे करोगे? पहले उन्हें स्वीकार करो, फिर खोजो कि ये शक्तियां क्या हैं? काम क्या है? तथ्य क्या है? हम उससे परिचित नहीं हैं। हम काम के बारे में जो कुछ भी जानते हैं वह दूसरों ने हमें सिखाया है। हम काम-भोग से गुजरे भी होंगे, लेकन दमित मन से, अपराध भाव से, जल्दी-जल्दी, जैसे कोई बोझ उतारना है, हल्का होना है। काम-भोग कोई प्रिय कृत्य नहीं है। तुम प्रसन्नता अनुभव नहीं करते, लेकिन तुम छोड़ भी नहीं सकते। जितना ही तुम उसे छोड़ना चाहते हो उतना ही वह आकर्षक होता जाता है। जितना ही तुम उसे नकारते हो, उतना ही वह तुम्हें निमंत्रित करता मालूम होता है।
तुम काम वासना को नकार नहीं सकते, लेकिन नकारने की नष्ट करने की मनोवृत्ति उस मन को ही, उस होश को ही, उस संवेदनशीलता को ही नष्ट कर देती है, जो काम वासना को समझ सकती है। इसलिए तुम बिना किसी संवेदना के ही काम भोग करते रहते हो। और तब तुम उसे समझ नहीं पाते। केवल गहरी संवेदनशीलता ही किसी चीज को समझ सकती है; उसके प्रति गहरा भाव, गहरी सहानुभूति और उसमें गहरी गति ही किसी चीज को समझ सकती है। तुम काम को केवल तभी समझ सकते हो, जब तुम उसके पास ऐसे जाओ जैसे कवि फूलों के पास जाता है। अगर फूलों के साथ अपराध अनुभव करो तो तुम फुलवारी से आंखें बंद किये गुजर जाओगे; तुम बड़ी जल्दबाजी में होओगे- एक विक्षिप्त जल्दबाजी। किसी कदर निकल भागने की फिक्र लगी रहेगी। फिर तुम सजग, होशपूर्ण कैसे रह सकते हो।
इसलिए तंत्र कहता है, "तुम जो भी हो उसे स्वीकार करो।" तुम अनेक बहु- आयामी ऊर्जाओं के महान रहस्य हो, उसे स्वीकार करो। और प्रत्येक ऊर्जा के साथ, गहरी संवेदनशीलता, और सजगता से, प्रेम और बोध के साथ यात्रा करो। उसके साथ यात्रा करो... तब ऊर्जा प्रत्येक वासना के अतिक्रमण का वाहन बन जाती है। तब प्रत्येक ऊर्जा सहयोगी हो जाती है। और तब संसार ही निर्वाण हो जाता है।
योग निषेध है, तंत्र विधेय है। योग द्वैत की भाषा में सोचता है, इसलिए यह योग शब्द है। योग का अर्थ है-दो चीजों को जोड़ना। उनका जोड़ा बनाना। लेकिन वहां चीजें दो हैं, वहां द्वैत है। तंत्र कहता है, "द्वैत नहीं है। और अगर द्वैत है तो तुम उसे एक नहीं कर सकते। कितना भी प्रयत्न करो, दो रहेंगे ही, कितना भी दो के दो रहेंगे ही। संघर्ष जारी रहेगा; द्वैत बना रहेगा।"
अगर संसार और परमात्मा दो हैं तो वे एक में नहीं जोड़े जा सकते। और अगर वे यथार्थ में दो नहीं है, दो की तरह सिर्फ भागते हैं, तो ही वे एक हो सकते हैं। अगर तुम्हारा शरीर और आत्मा दो है तो उनको जोड़ने का उपाय नहीं है। दो वे रहेंगे।

तंत्र कहता है, "द्वैत नहीं है, वह मात्र आभास है।" इसलिए आभास को मजबूत बनाने की जरूरत क्या है? इस आभास को मजबूत होने में सहयोग क्यों दिया जाए? इसी क्षण इसे समाप्त करो और एक हो जाओ। और एक होने के लिए स्वीकार चाहिए, संघर्ष नहीं। स्वीकार एक करता है। संसार को स्वीकारो, शरीर को स्वीकारो; उस सबको स्वीकारो जो उसमें निहित है। अपने भीतर दूसरा केंद्र मत निर्मित करो। क्योंकि तंत्र की दृष्टि में वह दूसरा केंद्र अहंकार के सिवाय कुछ नहीं है। स्मरण रहे, तंत्र की दृष्टि में वह अहंकार ही है। इसलिए अहंकार को मत खड़ा करो, सिर्फ बोध रखो कि तुम क्या हो।
और अगर लड़ोगे तो अहंकार वहां होगा ही। इसलिए ऐसा योगी खोजना मुश्किल है
जो अहंकारी न हो। सच में मुश्किल है। योगी निरहंकारिता की बात किये जाते हैं, लेकिन वे निरहंकारी नहीं हो सकते। उनकी पद्धति ही अहंकार निर्मित करती है। और संघर्ष वह पद्धति है, प्रक्रिया है। अगर लड़ोगे तो निश्चित ही- अहंकार को पैदा करोगे। जितना तुम लड़ोगे उतना अहंकार बलवान होगा। और अगर लड़ाई में जीत गए तो, तुम्हारा अहंकार परम हो जाएगा।
तंत्र कहता है, "संघर्ष नहीं।" और तब अहंकार की संभावना नहीं। लेकिन अगर
हम तंत्र की मानें तो बहुत सी समस्याएं खड़ी हो जाएंगी। क्योंकि अगर हम लड़ते नहीं तो हमारे लिए भोग ही रह जाता है। हमारे लिए "संघर्ष नहीं" का मतलब होता है भोग। और तब हम भयभीत हो जाते हैं। जन्मों-जन्मों हम भोग में डूबे रहे और कहीं नहीं पहुंचे। लेकिन हमारा जो भोग है वह तंत्र का भोग नहीं है। तंत्र कहता है, "भोगो, लेकिन होश के साथ।"
अगर तुम क्रोधित हो तो तंत्र यह नहीं कहेगा कि क्रोध मत करो। वह कहेगा कि पूरी तरह क्रोध करो, लेकिन साथ ही उसके प्रति सजग भी रहो। तंत्र क्रोध के खिलाफ नहीं है। तंत्र आध्यात्मिक नींद, आध्यात्मिक मूर्च्छा के खिलाफ है। होश रखो और क्रोध करो। और तंत्र का यही ग्रह्य रहस्य है कि अगर तुम होशपूर्ण रहे तो क्रोध रूपांतरित हो जाता है, क्रोध करुणा बन जाता है। इसलिए तंत्र के अनुसार क्रोध तुम्हारा शत्रु नहीं है; क्रोध बीज रूप में करुणा है। क्रोध की ऊर्जा ही करुणा बन जाती है। और अगर तुम उससे लड़ते हो तो करुणा की संभावना समाप्त हो जाती है।
इसलिए अगर तुम दमन में सफल हुए तो मृत हो जाओगे। दमन के कारण क्रोध तो नहीं रहेगा, लेकिन उसी कारण करुणा भी जाती रहेगी। क्योंकि क्रोध ही करुणा बनता है। अगर तुम काम के दमन में सफल हो गए- जो कि संभव है- तो काम तो नहीं रहेगा, लेकिन उसके साथ प्रेम भी नहीं रहेगा। क्योंकि काम के मर जाने पर वह ऊर्जा ही नहीं बचती जो प्रेम में विकसित होती है। तुम काम-रहित तो हो जाओगे, पर साथ ही प्रेम-रहित भी हो जाओगे। और तब तो असली बात ही चूक गए, क्योंकि प्रेम के बिना भगवत्ता नहीं है। और प्रेम के बिना मुक्ति नहीं है, और प्रेम के बिना स्वतंत्रता नहीं है।
तंत्र का कहना है कि इन्हीं ऊर्जाओं को रूपांतरित करना है। इसी बात को दूसरे ढंग से भी कहा जा सकता है। यदि तुम संसार के विरुद्ध हो तो निर्वाण संभव नहीं है, क्योंकि संसार को ही तो निर्वाण में रूपांतरित करना है। तब तुम उन्हीं बुनियादी शक्तियों के ही खिलाफ हो गए जो कि शक्तियों के स्रोत हैं। इसलिए तंत्र की कीमियां कहती है कि लड़ो मत, सभी शक्तियां जो भी तुम्हें मिली हैं उन्हें मित्र बना लो। उनका स्वागत करो। तुम इसे अहोभाग्य समझो कि तुम्हारे पास क्रोध है, कि तुम्हारे पास काम-वासना है, कि तुम्हारे पास लोभ है। अपने को धन्यभागी समझो क्योंकि वे अप्रकट स्रोत हैं। और उन्हें रूपांतरित किया जा सकता है और उन्हें प्रकट किया जा सकता है। और जब काम-वासना रूपांतरित होती है तो प्रेम बन जाती है। विष खो जाता है, कुरूपता खो जाती है। बीज कुरूप है, लेकिन वही जब जीवित होता है, अंकुरित होता है, पुष्पित होता है, तब उसका सौंदर्य प्रकट होता है। बीज को मत फेंकना, क्योंकि तब तुम उसके साथ फूलों को भी फेंक रहे हो। वे अभी उनमें नहीं हैं अभी प्रकट नहीं हैं कि तुम उन्हें देख सको। वे अप्रकट है लेकिन हैं। बीज का उपयोग करो ताकि तुम

फूलों को प्राप्त कर सको। इसलिए पहले स्वीकृति, एक अति संवेदनशील बोध और होश-तब भोग की अनुमति है।
एक बात और, जोकि वास्तव में बहुत ही हैरानी की है, लेकन वह तंत्र की गहरी
से गहरी खोजों में से एक है। और वह हैः जिसे भी तुम शत्रु मान लेते हो चाहे वह लोभ हो, क्रोध हो, घृणा हो, या काम हो, जो भी हो तुम्हारा मानना ही उन्हें शत्रु बना देता है। उन्हें परमात्मा का वरदान समझो और कृतज्ञ हृदय से उनके पास जाओ।
उदाहरण के लिए, तंत्र ने काम-ऊर्जा को रूपांतरित करने की अनेक विधियां विकसित की हैं। काम-वासना में ऐसे प्रवेश करते जाओ जैसे कोई परमात्मा के मंदिर में प्रवेश करता है। काम, कृत्य को ऐसे लो जैसे कि वह प्रार्थना है, जैसे कि वह ध्यान है। उसकी पवित्रता को अनुभव करो। इसीलिए खजुराहो, पुरी, कोर्णाक सभी मंदिरों में मैथुन की मूर्तियां बनी हैं। मंदिर की दीवारों पर काम-क्रीडा के चित्र बे-तुके लगते हैं- खासकर ईसाइयत, इस्लाम और जैन धर्म की आंखों में। उन्हें यह बात परस्पर विरोधी मालूम होती है कि मैथुन के चित्रों का मंदिर से क्या संबंध हो सकता है? खजुराहो के मंदिर की बाहरी दीवारों पर संभोग की, मैथुन की हर संभव मुद्रा पत्थरों में अंकित है। क्यों? मिंंदर में कम से कम उनका कोई स्थान नहीं है मनों में हो सकता हैं। ईसाइयत इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकती कि चर्च की दीवारों पर खजुराहो जैसे चित्र खुदे हों। असंभव!
आधुनिक हिंदू भी इस बात के लिए अपने को अपराधी अनुभव करते हैं। इसका कारण है कि आधुनिक हिंदू-मानस भी ईसाइयत के द्वारा निर्मित हुआ है। वे हिंदू- ईसाई है, और वे बदत्तर हैं- क्योंकि ईसाई होना तो ठीक है, लेकिन हिंदू-ईसाई होना बेहूदा है। वे अपराधी अनुभव करते हैं। एक हिंदू नेता पुरुषोतमदास टंडन ने तो यहां तक सलाह दी कि इन मंदिर को ध्वस्त कर देना चाहिए। वे हमारे नहीं हैं। सच ही वे हमारे नहीं मालूम पड़ते क्योंकि बहुत दिनों से, सदियों से तंत्र हमारे हृदयों से निर्वासित रहा। तंत्र हमारी मुख्य धारा नहीं रहा। योग मुख्य धारा रहा। और योग खजुराहो की बात सोच भी नहीं सकता। इसे नष्ट कर देना चाहिए।
तंत्र कहता है कि संभोग में ऐसे प्रवेश करो जैसे कोई पवित्र मंदिर में प्रवेश कर रहा हो। इसी कारण पवित्र मंदिरों की दीवारों पर उन्होंने संभोग के चित्र अंकित किए उन्होंने कहा कि काम-भोग में ऐसे उतरो जैसे तुम मंदिर में प्रवेश करते हो। इसलिए जब तुम किसी पवित्र मंदिर में प्रवेश करते हो, वहां संभोग के चित्र इसलिए हैं कि तुम्हारा मन दोनों में संबंधित हो जाए, दोनों का साहचर्यगत संबंध स्थापित हो जाए, ताकि तुम यह अनुभव कर सको कि संसार और परमात्मा दो विरोधी तत्त्व नहीं है, बल्कि एक हैं वे परस्पर विरोधी नहीं। वे ध्रुवीय विपरीताएं हैं जो एक दूसरे की सहायता करती हैं। और इस ध्रुवीयता के कारण ही अस्तित्त्व में हैं। अगर यह ध्रुवीयता नष्ट हो जाए तो सारा संसार ही नष्ट हो जाएगा। इसलिए इस गहरी एकतात्मकता को देखो। केवल ध्रुवीय बिंदुओं की मत देखो, उस आंतरिक धारा को देखो जो सबको एक करती है।
तंत्र के लिए सब कुछ पवित्र है। स्मरण रखो कि तंत्र के लिए सब कुछ पवित्र है; कुछ भी अपवित्र नहीं है। इसे इस भांति देखो। एक अधार्मिक आदमी के लिए सब कुछ अपवित्र है। तथाकथित धार्मिक आदमी के लिए कुछ चीजें पवित्र हैं और कुछ अपवित्र। तंत्र के लिए सब कुछ पवित्र है।
कुछ समय पहले एक ईसाई पादरी मेरे पास आया था। उसने कहा कि ईश्वर ने संसार
को बनाया। इसलिए मैंने पूछा, "पाप को किसने बनाया?" उसने कहा, "शैतान ने।" तब मैंने पूछा, "शैतान को किसने बनाया।" तब वह पादरी बिबूचन में पड़ गया। उसने कहा, "परमात्मा ने ही शैतान को बनाया।"
शैतान पाप को पैदा करता है और परमात्मा शैतान को। तब असली पापी कौन है- परमात्मा या शैतान? लेकन द्वैतवादी धारणा इसी प्रकार की विसंगतियों की ओर ले जाती है।

तंत्र के लिए ईश्वर और शैतान दो नहीं हैं। वास्तव में, तंत्र में कुछ ऐसा
ही नहीं जिसे शैतान कहा जा सके। तंत्र में सब कछ पवित्र है, सब कुछ भागवत है! और यही सही दृष्टि बिंदु है, गहनतम दृष्टि-बिंदु है। अगर इस संसार में कुछ चीज भी अपवित्र है तो प्रश्न उठता है कि वह कहां से आती है और वह कैसे संभव है।
इसलिए दो ही विकल्प हैं। पहला है नास्तिक का विकल्प, जो कहता है कि सब कुछ अपवित्र है। यह भी सही है। वह भी अद्वैतवादी है। उसे संसार में कहीं भी पवित्रता दिखाई नहीं देती। और दूसरा है तंत्र का विकल्प- सब कुछ पवित्र है। वह भी अद्वैतवादी है। लेकिन इन दोनों के मध्य में जो तथाकथित धार्मिक लोग हैं वे वास्तव में धार्मिक नहीं हैं- न तो वे धार्मिक हैं और न ही अधार्मिक-क्योंकि वे सदा द्वंद्व में जीते हैं। उनका पूरा धर्मशास्त्र दोनों द्वारों को मिलाने की कोशिश कर रहा है, और वे कभी मिलते नहीं।
अगर एक भी कोशिका, एक भी अणु अपवित्र है, तो सारा संसार अपवित्र हो जाता है। क्योंकि वह अकेला अणु इस पवित्र संसार में कैसे रह सकता है? यह कैसे संभव है! उसे सबका सहारा मिला है। होने के लिए, अस्तित्त्व के लिए उसे समस्त का सहारा चाहिए। और अगर अपवित्र तत्त्व को पवित्र तत्त्वों का सहारा मिला है तो दोनों में क्या अंतर हुआ? इसलिए जगत या तो समग्ररूपेण पवित्र है, बेशर्त या वह अपवित्र है। मध्य की कोई स्थिति नहीं है।
तंत्र कहता है कि सब कुछ पवित्र है। यही कारण है कि हम उसे समझ नहीं पाते। वह गहनतम अद्वैतवादी दृष्टि है- अगर हम इसे दृष्टि कह सकें तो। पर यह दृष्टिकोण है नहीं क्योंकि दृष्टिकोण द्वैतवादी ही होगा। तंत्र किसी चीज के विरुद्ध नहीं, इसलिए वह दृष्टिकोण नहीं है। वह अनुभूत एकत्व है, एक ऐसा एकत्व जिसे जिया गया है।
ये दो मार्ग हैं- योग और तंत्र। हमारे अपंग चित्र के कारण तंत्र प्रभावी नहीं हो सका। लेकन जब कोई भीतर से स्वस्थ होता है, जब भीतर अराजकता नहीं होती, तंत्र का अपना सौंदर्य है। और तभी वह वही समझ सकता है कि तंत्र क्या है? हमारे अशांत चित्त के कारण योग का आकर्षण है। योग हमें असानी से आकर्षित कर लेता है।
स्मरण रहे कि अंत में तुम्हारा चित्त ही किसी चीज आकर्षक या विकर्षक बनाता है। तुम ही निर्णायक कारक हो।
ये दोनों अलग-अलग मार्ग हैं। मैं यह नहीं कहता हूं कि योग के द्वारा कोई पहुंच नहीं सकता। योग के मार्ग से भी पहुंचा जा सकता है, लेकिन उस योग से नहीं जो आज प्रचलित है। जो योग आज प्रचलित है वह वास्तव में योग नहीं लेकिन वह तुम्हारे से रुग्ण चित्त की व्याख्या है। परम को उपलब्ध होने के लिए योग भी एक प्रामाणिक मार्ग हो सकता है, लेकन वह तभी संभव है जब कि तुम्हारे चित्त स्वस्थ हो, जब वह रुग्ण और बीमार न हो, तब योग का रूप ही कुछ और होता है। उदाहरण के लिए, महावीर का मार्ग योग है; लेकिन वे काम का दमन नहीं करते। उन्होंने काम को जाना है, उसे जीया है, उसे भली भांति परिचित हैं, वह उनके लिए व्यर्थ हो गया है इसलिए वह विदा हो गया है। बुद्ध का मार्ग योग है, लेकिन वे भी संसार से गुजरे हैं; वह उससे भली भांति परिचित हैं। वह उससे लड़ नहीं रहे। तुम जिसे जान लेते हो उससे मुक्त हो जाते हो। वह फिर सूखे पत्तों की भांति पेड़ से गिर जाता है। वह त्याग नहीं है, उसमें लड़ाई नहीं है। बुद्ध के चेहरे को देखो, वह लड़नेवाले का चेहरा नहीं है। वे लड़ नहीं रहे हैं। वे कितने शांत हैं, शांति के प्रतीक हैं और फिर अपने योगियों को देखो; लड़ाई उनके चेहरों पर अंकित है। गहरे में वहां बड़ा शोरगुल है, क्षोभ है, अशांति है, मानो वे ज्वालामुखी पर बैठे हों। उनकी आंखों में झांको और तुम्हें इसका पता चलेगा कि उन्होंने अपने समस्त रोगों को किसी गहराई में दबा रखा है। वे उनके पार नहीं गए।
एक स्वस्थ संसार में, जहां प्रत्येक व्यक्ति अपना प्रामाणिक जीवन जीता है, जहां कोई किसी का अनुकरण नहीं करता, बस अपने ही ढंग से जीता है, योग और

तंत्र दोनों ही मार्ग संभव हैं। वहां व्यक्ति उस गहरी संवेदनशीलता को उपलब्ध हो सकता है जो वासनाओं का अतिक्रमण करती है, वहां वह उस बिंदु पर पहुंच सकता है जहां कामनाएं व्यर्थ होकर गिर जाती हैं। योग से भी वह संभव है। लेकिन मेरे देखे उसी संसार में योग कारगर होगा जहां तंत्र भी कारगर होगा इसे स्मरण रखें।
हमें स्वस्थ और स्वाभाविक चित्त की जरूरत है। जिस संसार में स्वाभाविक मनुष्य होगा वहां योग और तंत्र दोनों ही वासनाओं के अतिक्रमण में सहयोगी होंगे। हमारे रुग्ण समाज में न तो योग और न तंत्र हमारा मार्ग दर्शन कर सकता है, कयोंकि अगर हम योग को चुनते हैं तो इसलिए नही कि हमारी कामनाएं व्यर्थ हो गई हैं। नहीं, कामनाएं तो अब भी अर्थपूर्ण हैं। वे गिरी नहीं, उन्हें बलपूर्वक हटाना है। अगर हम योग को चुनते हैं तो उसे दमन की विधि के रूप में ही चुनते हैं।
और यदि तंत्र को चुनते है तो सिर्फ चालाकी के रूप में, धोखे के रूप में ताकि हम भोग में उतर सकें। इसलिए अस्वस्थ चित्त के साथ न तो योग काम दे सकता है, और न ही तंत्र। वे दोनों ही हमें धोखे में ले जाएंगे। आरंभ करने के लिए तो स्वस्थ चित्त की, विशेष रूप यौन के तल पर स्वस्थ चित्त की जरूरत है। तब तुम्हें तुम्हारा मार्ग चुनने में कोई कठिनाई नहीं हैं। तुम योग चुन सकते हो; तुम तंत्र चुन सकते हो।
बुनियादी तौर से दो प्रकार के लोग हैः स्त्री और पुरुष- जैविक अर्थों में नहीं, मानिसक रूप में। जो मानसिक तौर से पुरुष हैं- आक्रमक, हिंसक, बहिर्मुखी योग उनका मार्ग है। जो बुनियादी तौर से स्त्रैण है- ग्रहणशील, निष्क्रिय और अहिंसक- तंत्र उनका मार्ग है।
इसे ठीक से ध्यान में रख ले। तंत्र के लिए मां काली, तारा देवी अनेक देवियां, भैरवियां बहुत महत्त्वपूर्ण है योग में तुम्हें कहीं किसी देवी का नाम नहीं सुनाई देगा। तंत्र में देवियां ही देवियां हैं और योग में देव ही देव। योग बाहर जाती हुई ऊर्जा है और तंत्र भीतर जाती हुई ऊर्जा है। इसलिए आधुनिक मनोविज्ञान की भाषा में कह सकते हैं कि योग बहिर्मुखी है और तंत्र अंतर्मुखी। इस लिए यह व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। अगर तुम अंतर्मुखी हो, तब संघर्ष, लड़ाई तुम्हारे लिए नहीं है। अगर तुम बहिर्मुखी व्यक्ति हो, तब संघर्ष तुम्हारा मार्ग है।
लेकिन हम उलझे हुए हैं, सिर्फ उलझन हैं सब अस्तव्यस्त है, सब गड़बड़ है। इसी कारण किसी से सहायता नहीं मिलती। उलटे, सब गड़बड़ हो जाता है। योग तुम्हें निक्षुब्ध करेगा, तंत्र तुम्हें अशांत करेगा, हर औषधि तुम्हारे लिए एक नई बीमारी पैदा करेगी, क्योंकि चुनाव करनेवाला ही रोगी है, विकृत है, उसका चुनाव ही रुग्ण है, रोग-ग्रस्त है।
इसलिए मेरा यह मतलब नहीं कि योग के द्वारा तुम पहुंच ही नहीं सकते। मैं तंत्र पर सिर्फ इसलिए जोर देता हूं क्योंकि हम समझ पायेंगे कि तंत्र क्या है?

तंत्र, अध्यात्म और काम
दूसरा प्रवचन

का अंश, तांत्रिक प्रेम

शिव देवी से कहते हैंः
"जब प्रेम किया जा रहा हो, प्रिय देवी, प्रेम में शाश्वत जीवन की भांति प्रवेश करो।"
शिव प्रेम से शुरू करते हैं। पहली विधि प्रेम से संबंधित है, क्योंकि प्रेम ही वह निकटतम अनुभव है जिसमें तुम विश्राम पूर्ण, रिलैक्स होते हो। अगर तुम प्रेम नहीं कर सकते तो तुम्हारा विश्रामपूर्ण होना असंभव है। अगर तुम विश्रामपूर्ण हो सको तुम्हारा जीवन एक प्रेममय जीवन होगा।
तनाव से भरा व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता। क्यों? तनाव से भरा व्यक्ति हमेशा किसी उद्देश्य के लिए जीता है। वह धन कमा सकता है, लेकिन प्रेम नहीं कर सकता। क्योंकि, प्रेम का कोई उद्देश्य नहीं प्रेम कोई वस्तु नहीं। तुम उसका संग्रह नहीं कर सकते; तुम उसे बैंक में जमा-पूंजी नहीं बना सकते, तुम उससे अपने अहंकार को मजबूत नहीं कर सकते। निश्चित ही प्रेम एक बहुत ही अर्थहीन कृत्य है, जिसका उसके पार कोई अर्थ नहीं, कोई उद्देश्य नहीं। उसका अस्तित्त्व किसी और चीज के लिए नहीं अपने ही लिए है। प्रेम प्रेम के लिए है। तुम कुछ पाने के लिए धन कमाते हो, वह एक साधन है। तुम घर बनाते हो किसी उद्देश्य से, उसमें रहने के लिए बनाते हो, यह एक साधन है। प्रेम साधन नहीं है। तुम प्रेम क्यों करते हो? किसलिए करते हो? प्रेम अपने में एक साध्य है। इसीलिए बुद्धि जो बहुत हिसाबी-किताबी है, तर्कवान है, जो हमेशा उपयोगिता की भाषा में सोचती है, प्रेम नहीं कर सकती। और जो बुद्धि हमेशा किसी उपयोगिता, किसी उद्देश्य की भाषा में ही सोचती है, वह सदा तनावपूर्ण रहती है। क्योंकि उद्देश्य की पूर्ति भविष्य में होगी, अभी और यहां कभी नहीं होती।
तुम मकान बनाते हो, तुम अभी और इसी समय उसमें नहीं रह सकते। पहले तुम्हें उसे बनाना पड़ेगा तुम भविष्य में ही उसमें रह पाओगे, अभी नहीं। तुम धन कमाते हो, बैंक में धन राशि भविष्य में जमा होगी, अभी नहीं। उपाय तुम्हें अभी करने होंगे, फल भविष्य में आएंगे।
प्रेम हमेशा यहीं है। उसका कोई भविष्य नहीं। इसीलिए प्रेम ध्यान के अति निकट है। इसीलिए मृत्यु भी ध्यान के अति निकट है; क्योंकि मृत्यु अभी और यहीं है। वह कभी भविष्य में नहीं घटती। क्या तुम भविष्य में मर सकते हो? केवल वर्तमान में ही मर सकते हो। कोई कभी भविष्य में नहीं मरता। तुम भविष्य में कैसे मर सकते हो या तुम अतीत में कैसे मर सकते हो? अतीत जा चुका, वह अब है ही नहीं, इसलिए तुम उसमें मर नहीं सकते। भविष्य अभी आया नहीं, इसलिए तुम उसमें कैसे मर सकते हो?
मृत्यु हमेशा वर्तमान में घटती है।
मृत्यु, प्रेम, ध्यान ये सभी वर्तमान में ही घटित होते हैं। इसलिए अगर तुम मौत से भयभीत हो, तो तुम प्रेम नहीं कर सकते। अगर तुम प्रेम से भयभीत हो, तो तुम ध्यान नहीं कर सकते। अगर तुम ध्यान से भयभीत हो तो तुम्हारा जीवन व्यर्थ है- उपयोगिता की दृष्टि से व्यर्थ नहीं बल्कि इस अर्थ में कि तुम कभी जीवन में किसी आनंद को अनुभव न कर सकोगे... निरर्थक।
प्रेम, ध्यान, मृत्यु- इन तीनों को एक दूसरे के साथ जोड़ने की बात विचित्र
लग सकती है लेकिन ऐसा नहीं है। ये तीनों समान अनुभव हैं। इसलिए अगर तुम एक में प्रवेश कर सको तो शेष दोनों में प्रवेश कर सकते हो।
शिव प्रेम से आरंभ करते हैं वह कहते हैं, "जब प्रेम किया जा रहा हो, प्रिय राजकुमारी, प्रेम में शाश्वत जीवन की भांति प्रवेश करो।"
इसका क्या अर्थ है? बहुत-सी बातें हैं। एक, जब तुमसे कोई प्रेम कर रहा हो
तो तुम्हारा कोई अतीत नहीं होता, कोई भविष्य नहीं होता। तुम वर्तमान में

होते हो। क्या तुमने कभी किसी से प्रेम किया है? अगर तुमने कभी प्रेम किया है, तब तुमने अनुभव किया होगा कि मन वहां नहीं है। इसीलिए तथाकथित बुद्धिमान लोग कहते हैं कि प्रेमी अंधे होते हैं, बुद्धिहीन और पागल। प्रेमी अंधे होते हैं क्योंकि उनके पास वे आंखें नहीं है जो भविष्य को देख सकें और जो वे कर रहे हैं उसका हिसाब किताब लगा सकें। वे अंधे हैं। वे अतीत को नहीं देख सकते। प्रेमियों को क्या हो जाता है? वे बिना किसी भूत और भविष्य का हिसाब लगाए अभी और यहीं होते हैं बिना किसी परिणाम की चिंता किए, इसीलिए लोग उन्हें अंधा कहते हैं। वे हैं। वे उन लोगों की नजरों में अंधे हैं जो बहुत हिसाबी- किताबी हैं, और जो हिसाबी किताबी नहीं है उनके लिए वे द्रष्टा हैं। जो हिसाबी किताबी नहीं है वे प्रेम को असली आंख, असली दृष्टि की भांति देखेंगे।
इसलिए पहली बात- प्रेम के क्षण में अतीत और भविष्य दोनों ही नहीं रहते।
एक सूक्ष्म बात समझने जैसी हैः- जब न भूत काल है न भविष्य तब क्या तुम इस क्षण को वर्तमान कह सकते हो? वर्तमान केवल इन दोनों के बीच में हैं- भूत और भविष्य के बीच। यह साक्षेप है। अगर कोई भूत नहीं कोई भविष्य नहीं, तब इसे वर्तमान कहने का क्या अर्थ है? यह निरर्थक है। इसीलिए शिव वर्तमान शब्द का प्रयोग नहीं करते। वे कहते हैं अनंत जीवन-शाश्वतता, शाश्वतता में प्रवेश करो।
हम समय को तीन कालों में विभाजित करते हैंः- भूत, वर्तमान, भविष्य। विभाजन गलत है, बिल्कुल गलत है। समय वास्तव में भूत और भविष्य है। वर्तमान समय का हिस्सा नहीं है, वर्तमान शाश्वतता का हिस्सा है। वह जो बीत चुका है वह जो आने वाला है, समय है। जो है वह समय नहीं, क्योंकि यह कभी बीतता नहीं यह सदा है। अभी सदा यहां है- सदा यहां है। यह अभी अंतहीन है, शाश्वत है।
अगर भूत से तुम चलो, तुम कभी वर्तमान में नहीं आते। भूत से तुम हमेशा भविष्य में चले जाते हो। ऐसी कोई घड़ी नहीं आती जो वर्तमान हो। भूत से तुम सदा ही भविष्य में पहुंच जाते हो। वर्तमान से तुम कभी भविष्य में नहीं जा सकते। वर्तमान से तुम गहरे और गहरे... और भी वर्तमान में और वर्तमान में... वही अनंत-जीवन है।
हम इसे इस तरह भी कह सकते हैंः भूत से भविष्य समय है। समय का अर्थ है कि सीधे सपाट मैदान में, सीधी रेखा में चलना इसे या हम यूं कह सकते हैंः यह क्षैतिज, हारिजोन्टल है। जैसे ही तुम वर्तमान में होते हो आयाम बदल जाता है। तुम ऊर्ध्वाधर, वर्टिकल गति करने लगते हो या ऊपर या नीचे, ऊंचाई की ओर या निचाई की ओर गति करने लगते हो। लेकिन तब तुम सीधी सपाट, एक ही रेखा में गति नहीं करते। कोई बुद्ध, कोई शिव समय में नहीं, अनंतता में जीता है।
जीसस से किसी ने पूछा, "तुम्हारे परमात्मा के राज्य में क्या होगा? जो आदमी यह उससे पूछ रहा था उसका तात्पर्य समय से न था। वह पूछ रहा था कि उसकी इच्छाओं का क्या होगा, वे कैसे पूरी होंगी? क्या वहां जीवन चिरथायी होगा या वहां मृत्यु होगी? क्या वहां कोई दुख और पीड़ा होगी? क्या वहां कोई निम्न और उच्च व्यक्ति होंगे। वह इसी संसार की चीजों के बारे में पूछ रहा था। तुम्हारे परमात्मा के राज्य में क्या-क्या होगा?
और जीसस ने उत्तर दिया- उत्तर झेन गुरुओं की भांति है। जीसस ने कहा, "वहां कोई समय नहीं होगा।" उस व्यक्ति को शायद यह बात समझ न आई होगी, उस व्यक्ति को इस तरह उत्तर दिया गयाः- वहां कोई समय न होगा। जीसस ने केवल एक बात कही, "वहां कोई समय न होगा।" समय हारिजान्टल है, सीधी-सपाट रेखा।
और परमात्मा का राज्य ऊर्ध्वाधर, वर्टिकल है। वह शाश्वत है, नित्य है।
यह सदा यहीं है; केवल तुम्हें ही समय से पार इसमें प्रवेश करना होगा।
इसलिए प्रेम पहला द्वार है... तुम समय के पार जा सकते हो। इसलिए हर कोई चाहता है कि प्रेम मिले, और वह प्रेम करे। और कोई नहीं जानता कि प्रेम की इतना महत्ता क्यों हैं? इसके लिए एक गहरी कामना क्यों है? और जब तक तुम इसे भली भांति समझ नहीं लेते न तो प्रेम कर सकते हो और न ही प्रेम पा सकते हो, क्योंकि प्रेम इस धरती पर एक गहरी से गहरी घटना है।

हम निरंतर यही सोचते हैं कि हर व्यक्ति, जैसा भी वह है, प्रेम पाने के योग्य है। यह मामला ऐसा नहीं है, यह इस तरह नहीं है। इसीलिए तुम निराश और दुखी होते हो। प्रेम एक दूसरा ही आयाम है। और अगर तुम समय में किसी से प्रेम करने की कोशिश करते हो, तो तुम अपनी कोशिश में असफल होओगे समय में, प्रेम संभव नहीं है।
मुझे एक घटना स्मरण हो आई है।
मीरा कृष्ण को प्रेम करती थी। वह एक राजकुमार की पत्नी थी। राजकुमार कृष्ण से ईर्ष्या करने लगा। कृष्ण कहीं था ही नहीं, कृष्ण वहां विद्यमान भी न था। कृष्ण का कोई भौतिक शरीर भी नहीं था। कृष्ण के भौतिक अतिस्व और मीरा के भौतिक अस्तित्त्व में पांच हजार वर्ष का अंतराल है। इसलिए, देखा जाए तो मीरा कृष्ण के प्रेम में कैसे पड़ सकती है? समय का इतना बड़ा अंतराल!
इसलिए एक दिन मीरा से उसके पति ने पूछा, "तुम अपने कृष्ण से बातें करती रहती हो, उसके सामने नाचती और गाती रहती हो, लेकिन वह है कहां? तुम किसके साथ इतना प्रेम करती हो?" मीरा कृष्ण से बातें करती हंसी मजाक करती, झगड़ती और रूठती। वह पागल दिखाई देती थी, वह हमारी नजरों में पगाल थी। इसलिए राजकुमार ने कहा, "तुम पागल तो नहीं हो गई? कहां है तुम्हारा कृष्ण? तुम किससे प्रेम करती हो? तुम किसके साथ बातें करती हो? और मैं यहां हूं और तुम मुझे बिल्कुल ही भूल गई हो।"
मीरा ने कहा, "कृष्ण यहां हैं, तुम यहां नहीं हो, क्योंकि कृष्ण सदा है शाश्वत है, तुम नहीं हो। वह सदा यहां रहेगा, वह सदा यहां था, वह यहां है। तुम यहां नहीं रहोगे, तुम यहां नहीं थे। एक दिन तुम यहां नहीं होओगे।" इसलिए मैं कैसे विश्वास करूं कि इन दो अनतित्त्वों में तुम यहां हो? दो अनतित्त्वों में अस्तित्त्व का होना कैसे संभव है?
राजकुमार समय में है, कृष्ण समयातीत है इसलिए तुम राजकुमार के निकट हो सकते हो पर दूरी मिटाई नहीं जा सकती। तुम दूरी होओगे। तुम समय में कृष्ण से बहुत-बहुत दूर होते हुए भी समीप हो सकते हो। लेकिन यह एक अलग आयाम है।
मैं अपने सामने देखता हूं और वहां एक दीवार है। मैं अपनी नजर घुमाता हूं
और वहां आकाश है। जब तुम समय में देखते हो, तो वहां सदा दीवार है। जब तुम समय के पार देखते हो वहां एक खुला आकाश है, अनंत असीम। प्रेम असीमता, अस्तित्त्व की अनंतता शाश्वतता के द्वार खोल देता है। इसलिए अगर तुमने वास्तव में कभी प्रेम किया हो तो प्रेम को ध्यान की विधि बनाया जा सकता है। यह वही विधि हैः ऐसे प्रेमी मत बनना जो अलग-अलग बाहर खड़ा हो गया है। प्रेम को और अनंतता, शाश्वतता में प्रवेश करो। जब तुम किसी से प्रेम करते हो, क्या तुम वहां एक प्रेम करने वाले के रूप में होते हो? अगर तुम वहीं हो, तो तुम समय में हो। और प्रेम झूठा है, नकली है। अगर अब भी तुम वहां मौजूद हो और कह सकते हो, "मैं हूं", तब तुम शारीरिक रूप से निकट हो सकते हो, आत्मिक रूप से तुम्हारे बीच ध्रुवीय अंतर है।
प्रेम में तुम नहीं, केवल प्रेम, केवल प्रेममयता ही बचनी चाहिए। प्रेममय बनो! अपने प्रेमी या प्रेमिका को दुलारते, पुचकारते, चुमकारते समय दुलार ही हो जाना। चुंबन लेते समय, चुंबन देने वाला या लेने वाला मत होना, चुंबन ही हो जाना। अहं को, मैं को बिल्कुल भूल जाओ; कर्म में ही लीन हो जाओ। कृत्य में इस तरह डूब जाओ कि कर्त्ता ही न बचे। और अगर प्रेम में इस तरह गति नहीं कर सकते तो चलने, खाने आदि कृत्यों को में तुम्हारे लिए इस तरह गति करना कठिन है, बहुत ही कठिन हैं, क्योंकि प्रेम अहंकार को मिटा देने के लिए सरलतम उपाया है। इसलिए जो अहंकारी हैं वे प्रेम नहीं कर सकते। वे इसके संबंध में चर्चा कर सकते हैं, गीत गा सकते हैं, लिख सकते हैं, लेकिन प्रेम नहीं कर सकते।
अहंकार प्रेम नहीं कर सकता।
शिव कहते हैं, "प्रेममय हो जाओ।" जब तुम आलिंगन में बंधे हो तो आलिंगन ही
हो जाओ, चुंबन ही हो जाओ। स्वयं को पूर्णतया भूल जाओ ताकि तुम कह सको, मैं हूं ही नहीं। केवल प्रेम ही है। तब हृदय नहीं धड़कता, प्रेम ही धड़कता है तब रक्त का

संचार नहीं होता, प्रेम ही संचरित होता है। तब आंखें नहीं देखती, तब प्रेम ही देखता है। तब हाथ स्पर्श नहीं करते, प्रेम ही स्पर्श करता है।
"प्रेम ही हो जाओ!" और शाश्वत जीवन में प्रवेश करो। प्रेम अचानक ही तुम्हारे जीवन का आयाम बदल देता है। तुम समय से बाहर फेंक दिये जाते हो। और तुम शाश्वतता के सम्मुख खड़े हो जाते हो।
प्रेम एक गहरा ध्यान बन सकता है, उतना गहरा जितना संभव हो सकता है। और प्रेमियों ने कभी कभी उसे जाना है जो संतों ने भी नहीं जाना। प्रेमियों ने उस केंद्र को छुआ है बड़े योगी भी चूक जाते हैं। लेकिन तब तक यह एक झलक मात्र ही होगी जब तक तुम अपने प्रेम को ध्यान में रूपांतरित नहीं कर लेते। तंत्र का यही अर्थ है "प्रेम का ध्यान में रूपांतर।" और अब तुम समझ पाओगे कि क्यों तंत्र "प्रेम और संभोग के संबंध में" इतनी बात करता है। क्यों? क्योंकि प्रेम वह सहजतम प्राकृतिक द्वार है जहां से तुम इस संसार के पार जा सकते हो, इस अनुप्रथ, हारिजान्टल आयाम से।
शिव को अपनी देवी के साथ देखो। दोनों की और ध्यान से देखो। वे दो दिखाई नहीं देते, वे एक हैं। एकत्व इतनी गहरी है कि वह प्रतीकात्मक बन गया है। हम सबने शिवलिंग देखा है। वह लिंग-प्रतीक है वह शिव की जननेंद्रिय का प्रतीक है। लेकिन वह अकेला नहीं, वह देवी की योनि में स्थित है। उस समय के हिंदू बहुत ही साहसी थे। अब जब तुम शिवलिंग देखते हो तो तुम्हें याद भी नहीं कि यह लिंग-प्रतीक है। हम भूल गए हैं; हमने इसे पूरी तरह भुला देने का प्रयत्न किया है। जुंग ने अपने संमरणों में एक बड़े मजे की घटना का उल्लेख किया है, वह भारत आया, वह कोणार्क के मंदिरों को देखने गया और कोणार्क के मंदिरों में बहुत से शिवलिंग हैं- लिंग-प्रतीक हैं जो पंडित उसे मंदिर दिखाने ले गया था, उसने शिवलिंगों को छोड़कर शेष सब की व्याख्या की। और वे संख्या में इतने थे कि उनसे बचना मुश्किल था। जुंग को अच्छी तरह पता था, लेकिन उस पंडित को चिढ़ाने के लिए वह बार बार पूछता, लेकिन ये क्या हैं? इस पर पंडित ने आखिर जुंग के कान में कहा, "यह बात यहां मत पूछो। मैं तुम्हें बाद में बता दूंगा। यह गुप्त बात है।" जुंग भीतर ही भीतर हंसा होगा। ये हैं आज के हिंदू।
मंदिर के बाहर आकार पंडित ने पास आकर कहा, "दूसरों के सामने पूछना आपके लिए ठीक नहीं था। अब मैं आपको बताता हूं। यह गुप्त बात है।" और तब फिर उसने जुंग के कान में कहा, "वे हमारे गुप्त अंग हैं।"
जब जुंग वापस गया, वह एक महान विद्वान से मिला पूर्वी विचार धारा का, मिथक का, दर्शन का प्रकांड पंडित था। उसने यह किसा हेनरिक जिम्मर को सुनाया। जिम्मर उन प्रतिभाशाली व्यक्तियों में से एक था जिन्होंने भारतीय चिंतन, मिथक दर्शन को गहराई से समझने का प्रयत्न किया था, और वह भारत का और इसकी चिंतन शैली का, जीन के प्रति इसके अताअकक दृष्टिकोण का प्रेमी था। जब उसने जंग से यह बात सुनी वह हंसा और उसने कहा, "नवीनता की दृष्टि से यह ठीक है। मैंने हमेशा महान भारतीय- बुद्ध, कृष्ण, महावीर के बारे में सुना था। तुम जो कुछ भी बता रहे हो वह महान भारतीयों के संबंध में नहीं केवल भारतीयों के संबंध में है।"
प्रेम, शिव के लिए महान द्वार है। और उनके लिए कामवासना कुछ ऐसी चीज नहीं जिसकी निंदा की जाए। उनके लिए काम बीज है और प्रेम उसका फूल है। अगर तुम बीज की निंदा करते हो, तो तुम फूल की निंदा कर रहे हो। काम वासना प्रेम बन सकती है। अगर वह कभी प्रेम नहीं बनती तो वह अपंग है। अपंगता की निंदा करो, काम वासना की नहीं। प्रेम में फूल आने ही चाहिए; काम वासना प्रेम बननी ही चाहिए। अगर ऐसा नहीं हो रहा, तो यह काम वासना की गलती नहीं। यह तुम्हारी गलती है। कामवासना केवल कामवासना ही न रह जाए यही तंत्र की शिक्षा है- इसका प्रेम में अवश्य रूपांतरण होना चाहिए। और प्रेम प्रेमी ही न रह जाए। यह प्रकाश में, ध्यान में, परम रहस्यमय शिखर में रूपांतरित होना चाहिए। प्रेम को कैसे रूपांतरित करें? कृत्य ही हो जाओ और कर्त्ता को भूल जाओ। प्रेम करते समय प्रेम ही हो जाओ। तब यह तुम्हारा प्रेम या मेरा प्रेम या किसी अन्य का प्रेम

नहीं रह जाएगा। वह मात्र प्रेम है। जब तुम वहां नहीं होते, तब परम स्रोत, परम धारा के हाथों में होते हो, तब तुम प्रेम में होते हो। वह तुम नहीं जो प्रेम में हो, तब प्रेम ने ही तुम्हें घेर लिया है, तुम मिट गए हो। तुम मात्र एक प्रवाहमान ऊर्जा हो गए हो।
डी. एच. लारेंस, जो इस सदी का बहुत ही सृजनात्मक प्रतिभा का व्यक्ति था, जाने या अनजाने तंत्र-विशेषज्ञ था। पश्चिम में उसकी पूरी तरह निंदा की गई, उसकी किताबों पर प्रतिबंध लगा दिया गया। न्यायालय में उस पर कई अभियोग चलाए गए; क्योंकि उसने कहा कि काम-ऊर्जा ही एक मात्र ऊर्जा है, यदि तुम उसके प्रति निंदा का भाव रखते हो और उसका दमन करते हो तो जगत के विपरीत जा रहे हो और तुम उस ऊर्जा के उच्चतर परिणामों को जानने के लिए कभी योग्य न हो सकोगे।
और दमन से यह काम-ऊर्जा कुरूप हो जाती है। यही दुशचक्र है। पुरोहित-पुजारी, तथाकथित धार्मिक लोग, पोप-पादरी, शंकराचार्य और दूसरे लोग- सभी काम की निंदा किए जाते हैं। वे कहते हैं कि यह कुरूप चीज है। जब तुम इसका दमन करते हो, यह करूप हो जाती है, इसलिए वे कहते हैं, देखो! तुम जो कर रहे हो, वह असुंदर है, अप्रिय है और तुम भी जानते हो कि कुरूप है।
लेकिन यह जो काम है, वह कुरूप नहीं, ये पादरी और पुरोहित हैं जिन्होंने उसे असुंदर बना दिया है। और एक बार जब उन्होंने उसे कुरूप बना दिया तो वे ठीक सिद्ध हो गए। और जब वे ठीक साबित हो गए तो तुम उसे ज्यादा से ज्यादा कुरूप बनाते चले जाते हो।
काम एक निर्दोष ऊर्जा है, तुम में बहता जीवन, तुम में जीवंत अस्तित्त्व। उसे अपंग मत बनाओ। उसे ऊंचे शिखरों की ओर गतिमान होने दो, काम को प्रेम बनने दो। इसमें अंतर क्या है? जब तुम्हारा चित्र में कामुकता है तो तुम दूसरे का शोषण करते हो। दूसरा सिर्फ इस्तेमाल करने का और फेंकने का साधन है। जब काम प्रेम बन जाता है, दूसरा साधन नहीं है, दूसरे का उपयोग नहीं किया जाता है। दूसरा वास्तव में दूसरा नहीं रह जाता। जब तुम प्रेम करते हो, प्रेम केंद्रित नहीं होता बल्कि दूसरा महत्त्वपूर्ण, अनूठा हो जाता है। ऐसा नहीं है कि तुम उसका शोषण कर रहे हो- नहीं। इसके विपरीत, तुम दोनों एक गहरे अनुभव के सहयोगी हो, शोषक और शोषित नहीं। तुम एक दूसरे को प्रेम के एक भिन्न जगत में गति करने के लिए सहयोग दे रहे हो।
काम शोषण नहीं है। प्रेम एक अलग प्रकार की दुनिया में एक साथ गति करना है। अगर यह गति क्षणिक नहीं है, और अगर यह गति ध्यान बन जाती है, अगर तुम स्वयं को पूरी तरह भूल जाते हो और प्रेमी और प्रेमिका विदा हो जाते है और वहां केवल प्रेम प्रवाहित होता है, तब शिव कहते हैं, "शाश्वत जीवन तुम्हारा है।"

तंत्र, अध्यात्म और काम
तीसरा प्रवचन

काम में समग्र समर्पण

तुम जो भी करो उसे ध्यान बनाते हुए समग्रस्ता से करो- काम को भी। यह समझना आसान है कि अकेले क्रोध कैसे किया जाए लेकिन तुम संभोग भी अकेले कर सकते हो। और उसके बाद जो तुम्हें मिलेगा उससे गुणात्मक भेद होगा।
जब तुम नितांत अकेले हो, अपना कमरा बंद कर लो और तुम इस तरह व्यवहार करो जैसे काम-क्रीड़ा में करते हो। अपने पूरे शरीर को हिलने-डुलने दो। कूदो, चीखो, चिल्लाओ- जो कुछ करने को मन हो रहा हो उसे करो। उसे समग्रस्ता से करो। सब कुछ भूल जाओ- समाज, वर्जनाएं आदि। अकेले ही काम-क्रीड़ा में रत हो जाओ; ध्यान पूर्वक, लेकिन अपनी सारी कामुकता इसमें डाल दो।
दूसरे के साथ, समाज हमेशा उपस्थित रहता है, क्योंकि दूसरा वहां मौजूद है। ऐसा गहरा प्रेम होना बड़ा मुश्किल है कि तुम यह अनुभव करो कि दूसरा वहां है ही नहीं। केवल अत्यंत गहरे प्रेम में, गहरी आत्मीयता में ही ऐसा संभव है कि तुम अपने प्रेमी या प्रेमिका के साथ होओ और ऐसा लगे कि वह है ही नहीं।
यही आत्मीयता का अर्थ है- "जैसा तुम अपने प्रेमी या प्रेमिका, पति या पत्नी के साथ कमरे में अकेले होओ, दूसरे का कोई भय न हो, तब तुम काम-कृत्य को उसकी समग्रस्ता से कर सकते हो। नहीं तो दूसरे की उपस्थिति सदा अवरोध बनी रहेगी। दूसरा तुम्हें देख रहा है, वह क्या सोचेगी? वह क्या सोचेगा? तुम यह क्या कर रहे हो? पशुओं जैसा व्यवहार कर रहे हो!"
कुछदिन पहले एक औरत मेरे पास आई। वह अपने पति की शिकायत लेकर आई थी। उसने कहा, "वह जब भी मुझसे प्रेम करता है उसका व्यवहार पशुओं जैसा हो जाता है।"
जब दूसरा उपस्थित होता है, वह तुम्हारी तरफ देख रहा है, तुम यह क्या कर रहे हो?" और तुम्हें सिखाया गया है कि कुछ बातें ऐसी हैं जो तुम्हें नहीं करनी चाहिए। यह वर्जित है, तुम समग्रस्ता से कुछ कर नहीं सकते।
अगर वास्तव में प्रेम है तब तुम ऐसा कर सकते हो जैसे कि तुम अकेले हो। और
जब दो शरीर एक हो जाते हैं, दोनों एक ही लय में हो जाते हैं तब द्वैत मिट जाता है। और काम पूरी तरह छोड़ा जा सकता है। और यह क्रोध की भांति नहीं है।
क्रोध हमेशा कुप है; काम हमेशा कुरूप नहीं। कभी-कभी वह इतना सुंदर होता
है जितना कि संभव है, पर केवल कभी-कभी। जब मिलन पूरा हो, जब दोनों एक लय हो गए हों, जब उनकी सांसें एक हो गई हों और उनके प्राण एक वर्तुल में प्रवाहित हो रहे हो, जब दोनों पूरी तरह एक दूसरे में खो गए हों और दो शरीर एक हो गए हों, जब धन और ऋण, स्त्री और पुरुष वहां न बचे हों, तब काम अत्यंत सुंदर है। लेकिन ऐसा हमेशा नहीं होता।
अगर ऐसा संभव नहीं है तो जब तुम अकेले हो, अपने काम-कृत्य को ध्यान की अवस्था में पागलपन की चरम सीमा तक ले जा सकते हो। कमरा बंद कर लो, इस पर ध्यान करो और अपने शरीर को इस तरह गति करने दो जैसे तुम इस पर कोई नियंत्रण नहीं कर रहे। सब नियंत्रण ढीला छोड़ दो।
पति-पत्नी एक दूसरे के सहयोगी हो सकते हैं, विशेष रूप से तंत्र में। तुम्हारी पत्नी, तुम्हारा पति या तुम्हारा मित्र बहुत ही सहयाक सिद्ध हो सकते हैं। ऐसा तभी हो सकता है अगर दोनों ही गंभीरतापूर्वक प्रयोग कर रहे हों। तब दोनों एक दूसरे को पूरी तरह अनियंत्रित होने में मदद दें। भूल जाओ सब सभ्यता को जैसे उसका कभी अस्तित्त्व ही नहीं था। ईडन के उपवन में वापस लौट जाओ। उस सेब को- ज्ञान के वृक्ष के फल को एक ओर फेंक दो। तुम फिर से वही आदम और हौवा बन जाओ जो ईडन के उपवन से निकाले जाने से पहले थे। पीछे लौट जाओ। मात्र निर्दोष, सरल जानवर हो जाओ और अपनी कामुकता को उसकी समग्रस्ता में भोगो। तुम फिर वही कभी नहीं हो पाओगे।

दो बातें होंगी। कामुकता विदा हो जाएगी, काम बचेगा, लेकिन कामुकता पूरी तरह विलीन हो जाएगी। और जब कामुकता नहीं होती तो काम दिव्य हो जाता है। जब वह तुम्हारे दिमाग में ही नहीं घूमती रहती, जब वह तुम्हारी सोच की विषय नहीं होती, जब वह एक सहज वृत्ति होती है- एक संपूर्ण कृत्य, केवल तुम्हारे दिमाग का ही न तुम्हारे होने का तुम्हारी पूरी बीइंग का कृत्य बन जाता है- तब यह दिव्य है। पहले कामुकता विदा होगी, और तब काम भी विदा हो जाएगी, क्योंकि एक बार जब तुम इसके गहनतर छोर को जान जाते हो तो तुम उस छोर को बिना यौन के उपलब्ध कर सकते हो।
लेकिन तुमने गहनतर छोर को जाना ही नहीं तो उसे किस तरह पा सकते हो? पहली झलक समग्रस्ता से किए गए काम-भोग में मिलती है। एक बार जान लेने से दूसरे मार्गों से भी यात्रा की जा सकती है। फूल को देखने मात्र से ही तुम उस परमसुख को प्राप्त कर सकते हो जो तुम्हें अपनी पत्नी या पति से संभोग करते समय चरमसीमा पर मिलता है। तारों को केवल निहारने से ही तुम उसमें गति कर सकते हो। एक बार जब तुम उस मार्ग को जान लेते हो, तुम्हें पता चल जाता है कि वह तो तुम्हारे भीतर ही है। पति-पत्नी केवल उसे जान लेने में एक दूसरे की सहायता करते हैं। वह तुम्हारे ही भीतर है। दूसरा तो कवेल उत्प्रेरक था, दूसरा तो केवल चुनौती था दूसरा तो उसे जानने के लिए तुम्हारी सहायता करने के लिए था जो तुम्हारे ही भीतर था।
और गुरु और शिष्य में यही घट रहा है। गुरु तुम्हारे भीतर जो सदा-सदा से छिपा है उसे दिखाने के लिए सिर्फ एक चुनौती बन सकता है। गुरु तुम्हें कुछ नहीं दे रहा। वह दे ही नहीं सकता, देने के लिए कुछ है नहीं। और जो कुछ भी दिया जा सकता है वह मूल्यवान नहीं क्योंकि वह केवल वस्तु होगी।
जो दिया तो नहीं जा सकता, लेकिन जिसकी प्रेरणा दी जा सकती वह मूल्यवान है। एक गुरु केवल तुम्हें उकसाता है। वह तुम्हें उस जगह पहुंचने के लिए पुकारता है, ललकारता है, जहां तुम उसे पहचान सको, जान सको जो पहले ही तुम्हारे पास था। एक बार तुम्हें उसका बोध हो जाए तो गुरु की आवश्यकता नहीं रहती।
हो सकता है कि काम विदा हो जो, लेकिन पहले कामुकता समाप्त हो जाएगी। तब काम एक शुद्ध, निर्दोष कृत्य हो जाता है। तब ब्रह्मचर्य फलित होता है। यह काम के विपरीत नहीं यह काम की अनुपस्थिति है। और इस भेद को स्मरण रखना, इसका तुम्हें ध्यान नहीं है।
पुराने धर्म काम और क्रोध की निंदा किए चले जाते हैं जैसे कि ये दोनों एक
ही श्रेणी के हों। वे नहीं है। क्रोध विनाशात्मक है। काम सृजनात्मक है। सभी पुराने धर्म दोनों की समान रूप से निंदा किए चले जाते हैं, जैसे कि काम और क्रोध, लोभ और काम, ईर्ष्या और काम एक समान हैं। वे नहीं हैं। ईर्ष्या विनाशात्मक है- हमेशा। यह कभी सृजनात्मक नहीं हो सकती, इससे कुछ भी नहीं हो सकता। क्रोध हमेशा विनाशकारी है, लेकिन काम के साथ ऐसा नहीं है।
काम सृजन का स्रोत हैं परमात्मा ने सृजन के लिए इसका उपयोग किया है। कामुकता ठीक ईर्ष्या जैसी है। काम वासना ऐसी नहीं है। कामुकता ईर्ष्या, क्रोध और लोभ के समान है- सदा विनाशात्मक। काम ऐसा नहीं है, लेकिन हमें विशुद्ध काम का कुछ पता ही नहीं है। हमें केवल कामुकता का ही पता है।
एक आदमी जो अश्लील चित्र देख रहा है या कोई काम-व्यभिचार की फिल्म देख रहा है, वह काम नहीं खोज रहा, वह कामुकता के पीछे है। मैं ऐसे लोगों को जानता हूं जो अपनी पत्नियों से भी काम-क्रीडा़ नहीं कर सकते जब तक वे कुछ अश्लील चित्र न देख लें, अश्लील पत्रिकाएं या किताबें न पढ़ लें। जब वे इन चित्रों को देखते हैं तभी उत्तेजित होते हैं। वास्तविक पत्नी उनके लिए कुछ भी नहीं। कोई चित्र, नग्न चित्र उनको अधिक उत्तेजित करता है। वह उत्तेजना कामकेंद्र में नहीं है, चित्र में है, सिर मैं है।
"काम-वासना का मस्तिष्क में रूपांतरण कामुकता है" इसके विषय में सोचना कामुकता है। इसे जीना बिल्कुल दूसरी बात है, यदि तुम इसे जी सको तो तुम इसके पार हो सकते हो। इसलिए किसी चीज से डरो नहीं। इसे जियो।

अगर तुम सोचते हो कि यह दूसरों के लिए विनाशकारी है, अकेले ही इसमें गति करो; दूसरो के साथ इसे मत करो। अगर तुम सोचते हो कि यह सृजनकारी है, तब कोई साथी ढूंढो, कोई मित्र ढूंढो। एक युगल बनाओ, एक तांत्रिक युगल, और उसमें समग्रस्ता से गति करो। अगर फिर भी तुम्हें ऐसा लगे कि दूसरे की उपस्थिति अवरोध बन रही है, तब तुम इसे अकेले ही कर सकते हो।

तंत्र, अध्यात्म और काम
चौथा प्रवचन

तांत्रिक काम-क्रीडा की आध्यात्मिकता

सिगमंड फ्रायड ने कहीं कहा है कि मनुष्य जन्म-जात स्नायु-रोगी है। यह अर्द्ध सत्य है। मनुष्य स्नायु-रोगी नहीं पैदा होता, लेकिन स्नायुरोग-ग्रस्त मनुष्यता में जन्म लेता है; और चारों तरफ का सामाजिक प्रवेश प्रत्येक व्यक्ति को देर-अबेर स्नायुरोगी बना देता है। आदमी जब पैदा होता है, वह प्राकृतिक, वास्तवकि, सामान्य होता है। लेकिन जैसे ही नवजात शिशु इस समाज का हिस्सा हो जाता है उस पर स्नायुरोग का प्रभाव पड़ना शुरू हो जाता है।
जैसे हम है, स्नायु-रोगी ही हैं। स्नायुरोग आदमी को बहुत गहरे खंड-खंड कर देता है। तुम एक नहीं हो, तुम दो हो या अनेक हो। इस बात को गहराई से समझ लें, तो ही तंत्र में गति हो सकती है। तुम्हारी भावनाएं और विचार दो अलग-अलग चीजे हैं, यही मूलरूप में स्नायुरोग है। तुम्हारे विचार और तुम्हारे भाव दो अलग-अलग खंड हो गए हैं, और तुमने भावों के साथ नहीं विचारो से तादात्म्य कर लिया है। और विचार की अपेक्षा भाव पक्ष अधिक वास्तविक है, भाव विचारों से अधिक प्राकृतिक हैं। तुम एक भाव-भरा हृदय लेकर पैदा होते हो, विचार अर्जित, कल्टिवेट किए जाते हैं, विचार समाज द्वारा दिए जाते हैं। और तुम्हारे भाव-भावनाओं पक्ष का दमन कर दिया जाता है। जब भी तुम कहते हो कि तुम महसूस कर रहे हो, तब भी तुम सोचते हो कि तुम महसूस कर रहे हो। भावनाएं मृत हो चुकी हैं और ऐसा किसी विशेष कारण से हुआ है।
जब बच्चा पैदा होता है वह भावशील प्राणी होता है, वह चीजों को महसूस करता है, वह अभी विचार शील प्राणी नहीं होता। वह प्राकृतिक है, ठीक उसी तरह जैसे इस प्रकृति में सब कुछ प्राकृतिक है- पेड़-पौधों की तरह या पशु पक्षियों की तरह। लेकिन हम उसे एक ढांचे में ढालना और संवारना शुरू कर देते हैं। उसे अपने मनोभावों को दबाना पड़ता है, क्योंकि बिना उन्हें दबाए वह हमेशा अपने लिए मुसीबतें खड़ी करता रहेगा। जब वह रोना चाहता है, वह रो नहीं सकता, क्योंकि उकसे माता पिता को यह अच्छा नहीं लगेगा, इससे उसकी निंदा की जाएगी, उसको प्रशंसा नहीं मिलेगी, प्यार नहीं मिलेगा। वह जैसा है वैसा ही स्वीकृत नहीं। उसका व्यवहार शिष्ट होना चाहिए। उसे विशेष आदर्शों और सिद्धांतों के अनुसार आचरण करना पड़ेगा, तभी उससे प्रेम किया जाएगा।
जैसा वह है, वह प्रेम का पात्र नहीं। जब वह कुछ विशेष नियमों का पालन करता है तभी उससे प्रेम किया जा सकता है। जो नियम उस पर थोपे जा रहे हैं, वे अप्राकृतिक हैं। जो प्राकृतिक है उसका दमन प्रारंभ हो जाता है और जो अप्राकृतिक है, अवास्तविक है उसको थोप दिया जाता है। यह अप्राकृतिक, अवास्तविक ही तुम्हारा मन है। एक ऐसी घड़ी आ जाती, जब यह फासला इतना बढ़ जाता है कि उसे मिटाना मुश्किल हो जाता है। तुम पूरी तरह भूलते चले जाते हो कि तुम्हारी वास्तविक प्रकृति कयाथी, और क्या है? तुम्हारा चेहरा झूठा है, असली चेहरा खो गया है और तुम अपने असली चेहरे को अनुभव करने से डरते हो, क्योंकि जैसे ही तुम्हें इसका अनुभव होगा, सारा समाज तुम्हारे विरुद्ध हो जाएगा। इसलिए तुम स्वयं भी अपनी वास्तविक प्रकृति के विरुद्ध हो।
इसी से तनाव की स्थिति पैदा होती है। तुम नहीं जानते कि तुम्हें क्या चाहिए तुम नहीं जानते कि तुम्हारी वास्तविक, प्रामाणिक आवश्यकताएं क्या है? और फिर आदमी अपनी अवास्तविक आवश्यकताओं को ही पूरा करने में लग जाता हैं, क्योंकि भाव-प्रवण हृदय ही तुम्हें समझ दे सकता है, एक दिशा दे सकता है... तुम्हारी वास्तविक आवश्यकता क्या है? जब इसका दमन कर दिया जाता है तुम प्रतीकात्मक आवश्यकताएं पैदा कर लेते हो। उदाहरण के लिए, तुम चाहे तो अधिक से अधिक खाते चले जाओ, अपने पेट को भोजन से ठूंसते चले जाओ, लेकिन तुम्हें ऐसा कभी नहीं अनुभव होगा कि तुम तृप्त हो गए हो। जरूरत प्रेम की है भोजन की नहीं,

लेकिन भोजन और प्रेम की जरूरत महसूस नहीं होती या दबा दी जाती है, तब भोजन की एक झूठी आवश्यकता को पैदा कर लिया जाता है। और तुम खाए चले जा सकते हो। क्योंकि आवश्यकता अवास्तविक है, इसे पूरा नहीं किया जा सकता। और हम अवास्तविक आवश्यकताओं में जिए चले जाते है, इसीलिए यहा कोई तृप्ति नहीं है। तुम चाहते हो लोग तुमसे प्रेम करें, यह मूलभूत नैसर्गिक आवश्यकता है, लेकिन इसे झूठी दिशा की ओर नहीं मोड़ा जा सकता। उदाहरण के लिए, प्रेम की तुम्हारी जरूरत एक झूठी जरूरत का रूप ले सकती है, अगर तुम दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करते तो तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारी तरफ ध्यान दें। हो सकता तुम एक राजनेता हो जाओ- भारी-भीड़ तुम्हारी तरफ ध्यान दे रही है- लेकिन असली जरूरत है कि तुम्हें प्रेम मिले। और अगर सारी दुनिया भी तुम्हारी तरफ ध्यान दे तो भी बुनियादी आवश्यकता पूरी नहीं होगी। मूलभूत आवश्यकता केवल एक व्यक्ति के प्रेम करने से, केवल एक व्यक्ति के ध्यान देने से ही पूरी हो सकती है।

जब तुम किसी से प्रेम करते हो, तुम उसकी तरफ ध्यान ही दे रहे हो। प्रेम और ध्यान देना दोनों बड़े गहरे में एक दूसरे से जुड़े हैं। यदि तुम प्रेम की इस जरूरत को दबा लेते हो, तब वह प्रतीक-आवश्यकता बन जाती है- दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की आवश्यकता। तुम्हारी यह आवश्यकता पूरी भी हो सकती है, लेकिन इससे तृप्ति न होगी। जरूरत झूठी है, प्राकृतिक बुनियादी जरूरत से अलग है।
तंत्र बहुत ही क्रांतिकारी विचारधारा है- प्राचीनतम होते हुए भी नवीनतम। तंत्र प्राचीनतम परंपरा होते हुए भी अपरंपरावादी है, यहां तक कि परंपरा विरोधी है। क्योंकि तंत्र कहता है, "जब तक तुम पूर्ण और एक नहीं हो जाते, तुम जीवन से ही वंचित रह जाते हो। तुम खंडों में ही विभाजित मत रहो, एक हो जाओ।"
एक होने के लिए क्या किया जाए? तुम इस संबंध में चिंतन कर सकते हो, लेकिन इससे कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि चिंतन विभाजित करने की विधि है। चिंतन विश्लेषण मूलक है। वह खंड़ों में विभाजित करता है। मनोभावनाए मूलक है। वह खंड़ों में विभाजित करता है। मनोभावनाए जोड़ती हैं, चीजों को एक करती हैं। इसलिए तुम सोचते रहो, चिंतन-मनन करते रहो, अध्ययन करते रहो। उससे तब तक कुछ न होगा जब तक कि तुम अपने भाव-केंद्र पर नहीं लौट आते। लेकिन यह बहुत कठिन है, क्योंकि जब भी हम भाव केंद्र के विषय में सोचते हैं, हम सोचते ही तो हैं।
जब तुम किसी से कहते हो, मैं तुमसे प्रेम करता हूं, तब जरा गौर से देखो कि
यह मात्र विचार है या भाव है। अगर यह सिर्फ ख्याल है तो तुम कुछ चूक रहे हो। अगर यह अहसास पूर्ण का है, तुम्हारा पूरा शरीर, मन, सब कुछ जो भी तुम हो इसमें लगा है। विचार में केवल तुम्हारा मस्तिष्क ही काम में लगा है और वह भी पूरा नहीं- केवल उसका एक ही अंश, एक गुजरता हुआ विचार, ही काम में लगा है। हो सकता है वह विचार अगले क्षण न रहे। केवल एक ही अंश काम करता है और जीवन में कितना दुख पैदा कर देता है, क्योंकि उस एक विचार-खंड के लिए तुम कितने वायदे कर देते हो जो तुम पूरे नहीं कर पाते।
तुम यह कह तो सकते हो, "मैं तुम्हें प्रेम करता हूं और सदा करता रहूंगा।"
अब इस वक्तव्य का पिछला भाग एक दिया गया वचन है जिसे तुम निभा नहीं सकते, क्योंकि यह एक विचार-खंड के द्वारा दिया गया है। तुम्हारे पूरे प्राण इसमें सम्मिलित नहीं हैं। और कल जब यह विचार-खंड नहीं बचेगा, तब तुम क्या करोगे? अब वह वचन बंधन बन जाएगा।
सार्त्रे ने कहीं कहा है कि प्रत्येक वायदा झूठा सिद्ध होने वाला है। तुम वचन दे नहीं सकते क्योंकि तुम पूर्ण नहीं हो, एक नहीं हो। मेरा एक खंड वचन देता है और जब वह खंड सिंहासन पर नहीं होता तो दूसरा खंड उसका स्थान ले लेता है, तब मैं क्या करूंगा? कौन वचन निभाएगा? जब मैं उसे निभाने का प्रयत्न करता

हूं, पांखड, हिवोसी का जन्म होता है, मैं उसे पूरा करने का दिखावा करता हूं, तब सब झूठ हो जाता है।
तंत्र कहता है, "भाव-केंद्र में गहरे उतर जाओ। उसके लिए क्या करना होगा
और कैसे उसमें पीछे लौटना होगा?" अब हम सूत्रों में प्रवेश करेंगे। ये सूत्र, प्रत्येक सूत्र तुम्हें पूर्ण, तुम्हें एक बनाने की चेष्टा है।

पहला सूत्रः संभोग के प्रारंभ में ध्यान आरंभिक अग्नि पर रखो, और उसे जारी रखते हुए, अंत में अंगारों से बचो।
काम, सेक्स एक गहन तृप्ति हो सकता है और कई कारणों से तुम्हें तुम्हारी पूर्णता में, तुम्हारी प्रकृति में, तुम्हारी वास्तविकता में वापस ले जा सकता है। उन कारणों को समझ लेना जरूरी है। एक, काम एक पूर्व समग्र कृत्य है। तुम तुम्हारे मन के, उसके संतुलन के बाहर फेंक दिए जाते हो। इसी कारण काम-वासना से तुम्हारा इतना भय है। तादात्म्य मन के साथ है और काम अ-मन का कृत्य है। तुम बुद्धिहीन हो जाते हो। उस समय तुम्हारी बुद्धि काम नहीं करती। कोई तर्क नहीं होता, कोई बौद्धिक प्रक्रिया नहीं होती। और अगर बुद्धि काम कर रही है तो वहां वास्तविक, प्रामाणिक काम-कृत्य नहीं होगा। तब वहां कोई काम-संवेग न होगा, कोई आर्गा जम नहीं होगा, कोई तृप्ति न होगी। तब काम-कृत्य मस्तिष्क क्रिया बनकर रह जाएगा, केवल किसी अंग विशेष तक ही सीमित रह जाएगा।
पूरी दुनिया में इतनी कामातुरता का कारण यह नहीं है कि दुनिया अति कामुक
हो गई है। इसका कारण है कि तुम काम को उसकी समग्रस्ता में भोग भी नहीं सकते, उसका आनंद नहीं ले सकते। पहले दुनिया अधिक कामुक थी। इसीलिए काम की लालसा से यही प्रकट होता है कि हम असली को चूक रहे हैं और झूठ को स्वीकार कर रहे हैं। सारा आधुनिक चित्त काम-ग्रस्त हो गया है क्योंकि काम कृत्य का स्थानांतरण मस्तिष्क में हो गया है, यह बौद्धिक हो गया है, इसके बारे में तुम सोचते हो। कई लोग मेरे पास आते हैं, वे कहते हैं कि वे हमेशा काम-वासना के बारे में सोचते ही रहते हैं। वे इसके बारे में पढ़कर, सोचकर, अश्लील चित्रों को देखकर ही सुख ले लेते हैं। और जब काम वासना को भोगने की वास्तविक स्थिति पैदा होती है तो अचानक उन्हें महसूस होता है कि उनकी रुचि इसमें नहीं है। उन्हें ऐसा भी लगता है कि जैसे वे नपुंसक हैं। उस के बारे में सोचते समय वे अपने भीतर एक प्रबल ऊर्जा को अनुभव करते हैं। जब वे वास्तव में उस कृत्य को करना चाहते हैं, तब उन्हें ऐसा महसूस होता कि जैसे उनमें कोई शक्ति नहीं, कोई वासना भी नहीं। उन्हें लगता है जैसे उनका शरीर मर गया है।
उन्हें क्या हो गया है? काम-कृत्य भी बौद्धिक हो गया है। वे केवल उसके संबंध में सोच सकते हैं, वे उसे कर नहीं सकते, क्योंकि करने में पूरे प्राण चाहिए तुम्हारी पूरी बीइंग उसमें सम्मिलित होगी। और जब भी पूरी बीइंग की आवश्यकता पड़ती है, बुद्धि बेचैन होने लगती है- क्योंकि तब यह मालिक नहीं रहती, तब बात उसके नियंत्रण से बाहर हो जाती है।
तंत्र तुम्हें पूर्ण बनाने के लिए संभोग का उपयोग करता है, लेकिन तब तुम्हें उसे ध्यान की विधि बनाना पड़ता है। तब तुमने जो कुछ भी काम के संबंध में सुना है, पढ़ा है, समाज, धर्म और गुरुओ ने जो कुछ सिखाया है- उसे भुलाकर उसमें प्रवेश करना पड़ता है। सब कुछ भूल जाओ, और समग्रस्ता से उसमें संलग्न हो जाओ। सब नियंत्रण भूल जाओ! नियंत्रण बाधा है, बल्कि तुम उसके वशीभूत हो जाओ, उसे अपने वश में मत करो।
उसमें इस भांति संलग्न हो जाओ जैसे तुम पागल हो गए हो, अ-मन पागलपन जैसा
ही दिखाई देता है। शरीर ही हो जाओ, पशु हो जाओ; क्योंकि पशु अविभाजित है, पूरा है। आधुनिक मानव जैसा है उसे देखते हुए लगता है कि उसे पूर्ण बनाने के लिए काम ही एक सरलतम संभावना है क्योंकि काम तुम्हारे भीतर एक गहरे से गहरा जैस-केंद्र है। तुम इससे ही उत्पन्न हुए हो। तुम्हारी प्रत्येक कोशिका, काम-कोशिका है। तुम्हारा सारा शरीर काम-ऊर्जा का चमत्कार है।
पहला सूत्र कहता हैः-

यहीं से सारी बात भिन्न हो जाती है। तुम्हारे लिए संभोग मात्र छुटकारा है, इसलिए जब तुम उसमें संलग्न होते हो, तुम उतावले हो जाते हो। तुम्हें मुक्ति चाहिए। उमड़ती हुई ऊर्जा बाहर बह जाएगी और तुम्हें एक राहत अनुभव होगी। यह राहत एक प्रकार की कमजोरी है। अध्यधिक ऊर्जा से तनाव पैदा होता है, उत्तेजना पैदा होती है। तुम्हें लगता है कि कुछ करना चाहिए। जब ऊर्जा निर्मुक्त हो जाती है, तुम दुर्बलता अनुभव करते हो। तुम चाहे तो इस दुर्बलता को चैन समझ सकते हो, क्योंकि अब कोई उत्तेजना नहीं, उमड़ती, ऊनती ऊर्जा नहीं। तुम शांत और शिथिल हो सकते हो! लेकिन यह शिथिलता नकारात्मकता है। अगर ऊर्जा को बाहर फेंककर तुम्हें विश्रांति मिल सकती है तो यह विश्रांति महंगी पड़ेगी। और यह विश्रांति केवल शारीरिक हो सकती है। यह गहरी नहीं हो सकती, यह आध्यात्मिक नहीं हो सकती।
पहला सूत्र कहता है, जल्दी मत करो, और समाष्ति के लिए लालयित मत होओ। प्रारंभ में ही बने रहो। संभोग के दो भाग हैं। आरंभ और अंत। आरंभ में ही रुके रहो। आरंभ में अधिक उत्तेजना नहीं, विश्रांति है, उष्मा है। अंत की ओर जाने की जल्दी मत करो। अंत को तो बिल्कुल भूल ही जाओ।
संभोग के प्रारंभ में ध्यान आरंभ कि अग्नि पर रखो...
जब तुम लबालब भरे हो, मुक्त होने की बात ही मत सोचो। बाहर बहने को आतुर इस ऊर्जा के साथ बने रहो। वीर्य-स्खलन की जल्दी मत करो। उसे बिल्कुल ही भूल जाओ! उस ऊष्मा भरी आरंभिक स्थिति के साथ पूरी तरह हो जाओ। अपने प्रेमी या प्रेमिका के साथ एक हो जाओ। एक वर्तुल निर्मित करो।
इसकी तीन संभावनाएं हैं। दो प्रेमियों का मिलन तीन आकृतियां बना सकता है- रेखा गणित की तीन आकृतियां। संभवतः तुमने इस संबधं में पढ़ा भी हो या एक पुराना चि़त्र देखा होगा जिसमें एक पुरुष और एक स्त्री तीन रेखागणितीय आकृतियों के बीच नग्न खड़े हैं। एक आकृति चतुर्मुज है, दूसरी त्रिकोण और तीसरी वर्तुलाकार।
यह संभोग के तांत्रिक विश्लेषणां में से एक पुराना विश्लेषण है। साधारणतः जब तुम संभोग कर रहे होते हो वहां चार व्यक्ति होते हैं, दो नहीं- यह चतुर्भुज है। चार कोण होते हैं, क्योंकि तुम दो खंडों में विभाजित हो- विचारखंड और भाव खंड- तुम्हारा सहभागी भी दो खंडों में विभाजित है। तुम चार व्यक्ति हो। उस समय वहां दो व्यक्तियों का नहीं चार व्यक्तियों का मिलन होता है। यह एक भीड़ है। और वास्तव में ऐसे मिलन में कोई गहराई नहीं होती। वहां चार कोण हैं, मिलन संभव नहीं। मिलन हो रहा है ऐसा दिखाई पड़ता है पर होता नहीं। वहां मिलन हो ही नहीं सकता, क्योंकि तुम्हारा कुछ गहनतर अंश छिपा हुआ है और तुम्हारी प्रेमिका का भी गहनतर अंश छिपा हुआ है। केवल दो दिमागों का मिलन हो रहा है, केवल दो विचार-प्रक्रियाओं का मिलन हो रहा है। दो भाव-प्रक्रियाओं का नहीं। वे तो छिपी हुई हैं।
दूसरे प्रकार का मिलन त्रिभुज की तरह हो सकता है। तुम दो हो- आधार के दो कोण। अचानक किसी क्षण में तुम एक हो जाते हो, त्रिज के तीसरे कोण की भांति। लेकिन अचानक एक क्षण के लिए... द्वैत खो जाता है और तुम एक हो जाते हो। यह चतुर्भुजाकार मिलन से बेहतर है, क्योंकि कम से कम एक क्षण के लिए तो ऐक्य घटित होता है। वह ऐक्य तुम्हें स्वास्थ्य एवं शक्ति प्रदान करता है। तुम पुनः जीवंत और युवा अनुभव करते हो।
लेकिन तीसरे प्रकार का मिलन सबसे अच्छा है, तीसरा तंत्र-मिलन हैः तुम एक वर्तुल बन जाते हो। तब कोई कोण नहीं होते, और मिलन केवल एक क्षण के लिए ही नहीं होता। मिलन अल्पकाल के लिए नहीं होता, समय उसमें बचता ही नहीं। और यह तभी संभव है जब तुम यह नहीं चाहते कि स्खलन हो। अगर तुम स्खलन ही चाहते हो, तो यह त्रिकोण-मिलन ही होगा- क्योंकि जैसे ही वीर्य-स्खलन होगा, मिलन-बिंदु खो जाएगा।
आरंभिक अवस्था में रुके रहो, अंत की ओर गति मत करो। आरंभ में कैसे रुके रहें? बहुत सी बातें ध्यान में रखनी होंगी।

पहली बात, संभोग को इस तरह मत लो जैसे कि कहीं और पहुंचना है। इसे साधन की भांति मत लो- यह अपने में ही साध्य है। इसका कोई लक्ष्य नहीं, यह कोई माध्यम नहीं। दूसरी बात, भविष्य की मत सोचो, वर्तमान में स्थित रहो। अगर तुम काम-कृत्य के आरंभिक भोग में वर्तमान में नहीं हो सकते तो तुम कभी भी वर्तमान में नहीं टिक सकते, क्योंकि इस कृत्य की प्रकृति ही ऐसी है कि तुम वर्तमान में फेंक दिए जाते हो।
वर्तमान में स्थित रहो। दो शरीरों, दो आत्माओं के मिलन का सुख भोगो और एक दूसरे मे लीन हो जाओ... एक दूसरे में पिघल जाओ। भूल जाओ कि तुम्हें कहीं पहुंचना है। उस क्षण में स्थित रहो, कहीं जाना नहीं है, पिघल जाओ। प्रेम की उष्मा पिघल कर एक दूसरे में विलीन हो जाने की परिस्थिति बनाओ।
इसी कारण अगर प्रेम नहीं है तो संभोग शीघ्रता में किया गया एक कृत्य है। तुम दूसरे का उपयोग कर रहे हो, दूसरा साधन मात्र है। और दूसरा तुम्हारा उपयोग कर रहा है। तुम दोनों एक दूसरे का शोषण कर रहे हो, एक दूसरे में विलीन नहीं हो रहे। प्रेम में तुम एक दूसरे में खो जाते हो। प्रारंभ में यह एक दूसरे में खो जाना, एक नई दृष्टि देगा।
अगर तुम इस कृत्य को समाप्त कर देने की जल्दी में नहीं हो तो धीरे-धीरे
यह कृत्य कामुक कम, और आध्यात्मिक अधिक हो जाता है। जननेंद्रिय भी एक दूसरे में वित हो जाती हैं। दो शारीरिक ऊर्जाओं के बीच एक घनिष्ठ सहभागिता स्थापित हो जाती है और घंटों तुम्हारा साथ बना रह सकता है। जैसे-जैसे समय बीतता है इस साथ में और और गहराई आती जाती है। लेकिन सोच-विचार में मत पड़ना। उस क्षण के साथ रहो, उसकी गहराई में डूब जाओ। वह क्षण परमानंद बन जाता है, समाधि बन जाता है। अगर तुम उसे अनुभव कर सको स्पष्ट अनुभव कर सको, तुम्हारे चित्त की कामुकता-विलीन हो जाएगी। और उसके माध्यम से ब्रह्मचर्य उपलब्ध हो सकेगा। यह विरोधाभासी प्रतीत होता है, क्योंकि हम हमेशा इस ढंग से सोचते रहे हैं कि अगर किसी व्यक्ति को ब्रह्मचारी ही बने रहना है तो उसे अपने विपरीत यौन की तरफ आंख उठाकर भी उससे किसी प्रकार का संबंध नहीं बनाना चाहिए... उससे बचो, भाग जाओ! तब एक झूठा ब्रह्मचर्य घटता है। मन विपरीत यौन (आपोजिटसेक्स) के बारे में निरंतर सोचता रहता है। और जितना तुम दूसरे से भागते हो, उतना ही ज्यादा तुम उसके बारे में सोचने के लिए विवश हो जाते हो, क्योंकि वह तुम्हारी बुनियादी, गहरी जरूरत है।
तंत्र कहता है, "पलायन की चेष्टा मत करो- पलायन संभवन नहीं। बल्कि इससे पार होने के लिए प्रकृति का उपयोग करो। संघर्ष मत करो। अतिक्रमण के लिए प्रकृति को स्वीकार करो। प्रेमी या प्रेमिका से तुम्हारा यह संपर्क, बिना अंत के, अगर इसे लंबाया जा सके, बस, आरंभ में ठहरकर... । उत्तेजना शक्ति है। तुम इसे गंवा सकते हो, तुम शिखर तक पहुंच सकते हो, और फिर ऊर्जा नष्ट हो जाती है और पीछे आती है एक कमजोरी, एक खिन्नता। तुम इसे एक प्रकार की विश्रांति, रिलैक्सेशन की तरह ले सकते हो- यह नकारात्मक है।"
तंत्र तुम्हें उच्चतर विश्रांति का एक आयाम प्रदान करता है जो विधेयात्मक है। दोनों साथी एक दूसरे में खो जाते है, एक दूसरे को प्राणदाई शक्ति देते हैं, वे एक वर्तुल बन जाते हैं, और उनकी ऊर्जा एक वर्तुल में संचारण करने लगती है। वे दोनों एक दूसरे को जीवन की नव-शक्ति देते हैं कोई ऊर्जा नष्ट नहीं होती, बल्कि और शक्ति प्राप्त होती है, क्योंकि विपरीत यौन, के संपर्क से तुम्हारी प्रत्येक कोशिका को चुनौती मिलती है, प्रत्येक कोशिका उत्तेजित हो जाती है। और अगर तुम उस उत्तेजना को शिखिर तक पहुंचने से रोककर उसमें विलीन हो सको, आरंभ में थिर रह सको, अग्नि को भड़कने न दो, ऊष्मा बनाए रखते हो, तो दो उष्माओं का मिलन होगा।
तुम इस काम-कृत्य को, संभोग को दीर्धकालिक बना सकते हो। बिना स्खलन के, बिना ऊर्जा को बाहर फेंके यह कृत्य ध्यान बन जाता है। और इसके द्वारा तुम्हारा खंडित व्यक्तित्व अखंडित हो जाता है।

सभी प्रकार के स्नायु-तनाव का कारण व्यक्तित्व का खंड-खंड हो जाना है। अगर ये खंड पुनः जुड़ जाएं तो तुम फिर एक निर्दोष बच्चे हो सकते हो। एक बार जब तुम निर्दोष्ता को पहचान लेते हो, तुम जैसा समाज को व्यवहार चाहिए तुम करते जाते हो, लेकिन अब यह व्यवहार केवल अभिनय है एक नाटक है। तुम इसमें उलझे नहीं हो। यह एक जरूरत है, इसलिए तुम करते हो, लेकिन तुम उसमें नहीं हा। तुम सिर्फ अभिनय कर रहे हो। तुम्हें नकली चेहरे लगाने ही पड़ेंगे, तुम एक ऐसी दुनिया में रहते हो जो झूठ है; नहीं तो यह दुनिया तुम्हें कुचल डालेगी और मार डालेगी। हमने अनेक असली चेहरों की हत्या कर दी है। हमने जीसस को सूली लगाई क्योंकि वह एक वास्तविक, सच्चे मनुष्य की भांति आचरण करने लगा। अवास्तविक, झूठा समाज इसे सहन नहीं कर सकेगा। हमने सुकरात को जहर पिलाया क्योंकि वह एक वास्तविक की भांति व्यवहार करने लगा।
उसी तरह आचरण करो जैसा समाज चाहता है, अपने और दूसरों के लिए अनावश्यक समस्याएं मत खड़ी करो। लेकिन एक बार जब तुम्हें अपनी वास्तविकता और संपूर्णता का बोध हो जाता है, अवास्तविक समाज तुम्हें पागल नहीं बना सकता। संभोग के स्खलन में ऊर्जा नष्ट होती है। तब आग बचती नहीं। तुम सिर्फ बिना कुछ प्राप्त किए अपनी ऊर्जा से छुटकारा पा लेते हो।
दूसरा सूत्रः
हम इससे भी भयभीत हैं... संभोग करते समय अपने शरीरों को हिलने-डुलने भी नहीं देते- क्योंकि अगर तुम्हारे शरीरों को अधिक हिलने-डुलने दिया जाए तो काम-वासना सारे शरीर पर छा जाती है। अगर केवल काम-केंद्र तक ही सीमित रहती है तो इस पर नियंत्रण किया जा सकता है, मन पर भी काबू रखा जा सकता है। जब यह सारे शरीर में फैल जाती है, तब तुम इसे अपने नियंत्रण में नहीं रख सकते। हो सकता है तुम कांपने लगो, चीखना चिल्लाना शुरू कर दो और एक बार यह सारे शरीर में व्याप्त हो जाए तो तुम अपने शरीर पर नियंत्रण न रख सकोगे।
हमने सारी दुनिया में, विशेष रूप से स्त्रियों की सारी चेष्टाओं को दबा दिया है। वे हिल-जुल भी नहीं सकतीं। वे मृत शव की भांति पड़ी रहती हैं। पुरुष ही उनके साथ कुछ करते हैं, वे उनके साथ कुछ नहीं करतीं। वे मात्र निष्क्रिय, निश्चेष्ट भागीदार हैं। ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि सारी दुनिया में पुरुष ही इस प्रकार स्त्रियों को दबाते हैं?
भय है- क्योंकि अगर एक बार काम-वासना स्त्री के पूरे शरीर में व्याष्त हो
गई तो स्त्री को तृप्त करना पुरुष के लिए कठिन हो जाएगा। क्योंकि स्त्री को एक के बाद एक काम-संवेग, ऑरगॉज्म होंगे, पुरुष को ऐसा नहीं होगा। किसी भी स्त्री को एक के बाद एक कम-से-कम तीन ऑरगॉज्म हो सकते हैं, लेकन पुरुष को केवल एक ही बार काम-संवेग होता है, जब पुरुष की काम-उत्तजना शिखर पर होती है वह ऑरगॉज्म अनुभव करता तब उस समय स्त्री में काम उत्तेजित होना शुरू होता है, वह आरगेम के लिए तैयार होती है। तब बात मुश्किल हो जाती है। कैसे इसके लिए कुछ किया जाए।
उसे तुरंत दूसरे पुरुष की आवश्यकता अनुभव होती है, और सामूहिक यौन-संबंध वर्जित हैं। पूरी दुनिया में हमने एक विवाही समाज बनाए हैं। इसलिए उचित है कि स्त्री को दबा दिया जाए। इसलिए, वास्तव में अस्सी से नब्बे प्रतिशत स्त्रियों को कभी पता ही नहीं चलता काम का अंत्यत संवेग क्या है? वे बच्चों को जन्म दे सकती हैं, यह दूसरी बात है। वे पुरुष को तृप्त कर सकती हैं यह भी दूसरी बात है। लेकिन वे स्वयं की तृप्ति को अनुभव नहीं कर सकतीं। अगर सारी दुनिया में तुम आंखों में ऐसी कड़वाहट देखते हों- उदासी, खीझ, चिढ़चिढ़ापन देखते हो- यह स्वाभाविक है। उनकी बुनियादी आवश्यकता पूरी नहीं होती।
यह कंपन बड़ा अनूठा है क्योंकि संभोग में जब तुम कांपते हो ऊर्जा पूरे शरीर में प्रवाहित होने लगती है; पूरा शरीर आंदोलित हो जाता है। शरीर की प्रत्येक कोशिका इसमें सम्मिलित है। प्रत्येक कोशिका जीवंत हो जाती है, क्योंकि प्रत्येक कोशिका काम-कोशिका है।

जब तुम पैदा हुए थे, दो काम-कोशिकाओं का मिलन हुआ था और तुम अस्तित्त्व में आए थे, तुम्हारा शरीर निर्मित हुआ था। वे, दो काम-कोशिकाएं तुम्हारे शरीर में सर्वत्र हैं। वे गुणा होती गई, बढ़ती गई, बढ़ती गई, लेकिन कोशिका ही तुम्हारी मूल इकाई रहती है। जब तुम्हारा सारा शरीर कांप उठता है तब केवल तुम और तुम्हारा प्रेमी ही नहीं मिलते, तुम्हारे शरीर में एक एक कोशिका विपरीत कोशिका से मिलन होता है। यह कंपन इसी बात की खबर देता है। देखने में यह जानवरों जैसा लगेगा, लेकिन आदमी भी तो एक जानवर है और इसमें कुछ बुराई भी नहीं।

यह दूसरा सूत्र कहता हैः-जब ऐसे आलिंगन में तुम्हारी इंद्रियां पत्तों
की भांति कांपने लगती हैं...
आंधी-तूफान चल रहा है और पेड़ कांप रहा है, यहां तक कि जड़ें भी हिल उठी हैं, पत्ते भी कांप रहे हैं। बस, सिर्फ पेड़ की भांति हो जाओ। प्रचंड आंधी चल रही है, और काम एक आंधी ही है- तुम्हारे भीतर महा ऊर्जा प्रवाहित हो रही है। कांटों, आंदोलित हो उठो! अपने शरीर की प्रत्येक कोशिका को नाचने दो। और ऐसा दोनों के लिए होना चाहिए। प्रेमिका भी नाच उठी है, उसकी भी प्रत्येक कोशिका आंदोलित हो उठी है। केवल तभी दोनों का मिलन संभव है। तब बौद्धिक का मानसिक तल पर मिलन नहीं होता यह तुम्हारी जैविक-ऊर्जाओं का मिलन होता है।
इस कंपन में प्रवेश करो। कांपते समय स्वयं किनारे पर ही खड़े मत रहना, केवल द्रष्टा ही मत बने रहना, क्योंकि बुद्धि दर्शक है। एक ओर हटकर मत खड़े हो जाना! कंपन ही हो जाना। सब कुछ भुलाकर कंपन ही हो जाना। यह तुम्हारा शरीर ही नहीं कंप रहा, तुम्हारे पूरे प्राण, तुम्हारा होना कांप उठा हैं। तुम स्वयं कंपन ही हो गए हो। तब वहां दो शरीर नहीं, दो मन नहीं। प्रारंभ में कांपती हुई दो ऊर्जाएं... और अंत में एक वर्तुल, दो नहीं।
इस वर्तुल में क्या घटना घटेगी? एक, तुम अस्तित्त्वगत शक्ति के अंश हो जाओगे- सामूहिक चित्त के नहीं अस्तित्त्वगत ऊर्जा के अंश हो जाओगे। तुम संपूर्ण ब्रह्मांड के अंश हो जाओगे, उस कंपन में तुम संपूर्ण ब्रह्मांड के अंश हो जाओगे। वह एक महान सृजन का क्षण है। तुम्हारे ठोस शरीर पिघल जाते हैं, तुम तरल होकर एक दूसरे में प्रवाहित होने लगते हो। बुद्धि विसर्जित हो जाती है। विभाजन मिट जाताहै। तुम एक हो जाते हो।
यही अद्वैत है। दो नहीं बचे। अगर तुम इस अद्वैत को अनुभव नहीं कर सकते तो अद्वैत के सभी बाद, सभी सिद्धांत व्यर्थ है। वे मात्र शब्द हैं। एक बार अगर तुम्हें अस्तित्त्वगत अद्वैत के इस क्षण का बोध हो जाए तो केवल तभी तुम उपिनष्दों को समझ पाओगे, तभी तुम समझ सकोगे कि रहस्यदशद्र किस ब्रह्मांडीय एक्य की संपूर्णता की बात करते हैं। तब तुम जगत से अलग नहीं हो, उसके शत्रु नहीं हो। तब सारा असितत्त्व तुम्हारा घर है।
और इस भाव के उत्पन्न होते ही कि अस्तित्त्व मेरा घर है, सभी चिंताएं समाप्त हो जाती हैं। तब कोई पीड़ा नहीं, दुख नहीं, संघर्ष नहीं, शत्रुता नहीं। लाओत्सु इसे ताओ कहते हैं, शंकराचार्य इसे अद्वैत कहते हैं। आप इसको अपना शब्द दे सकते हैं, लेकिन इसका अनुभव एक प्रगाढ़ प्रेम आलिंगन में होना आसान है। लेकिन जीवंत बनो, आंदोलित होओ, शरीर को कांपने दो, स्वयं कंपन ही हो जाओ।

तीसरा सूत्रः-बिना आलिंगन में बंधे, केवल मिलन की स्मृति से ही रूपांतरण।
एक बार जब तुम उसे जान लेते हो, तब दूसरे साथी की भी जरूरत नहीं रहती। तुम सिर्फ उस कृत्य को स्मरण करके ही उसमें प्रवेश कर सकते हो। लेकिन तुम्हें पहले उसकी अनुभूति होनी जरूरी है। अगर तुम उस अनुभूति से परिचित हो, तो तुम बिना दूसरे साथी के ही उस कृत्य में प्रवेश कर सकते हो। यह जरा मुश्किल लगती है बात, लेकिन ऐसा घटता है। और जब तक ऐसा घटित न हो तुम दूसरे पर निर्भर ही बने रहते हो- एक निर्भरता बन जाती है। ऐसा कई कारणों से होता है।

अगर तुम्हारे पास उसकी अनुभूति है, अगर तुमने उस क्षण को जाना है जब तुम नहीं बचे थे लेकिन वहां एक आंदोलित ऊर्जा थी जिसमें तुम एक हो गए थे और वहां एक वर्तुल निर्मित हो गया था, और उस घड़ी में कोई दूसरा साथी नहीं था। केवल तुम हो, और साथी के लिए तुम नहीं हो; केवल वही है।
क्योंकि एक ऐकय का भाव तुम्हारे भीतर है वहां दूसरा साथी नहीं है। स्त्री के लिए यह अनुभूति सरल है, क्योंकि संभोग करते समय वे सदा अपनी आंखें बंद कर लेती हैं।
इस विधि को करते समय अच्छा है कि तुम अपने आंखें बंद रखो। केवल तभी तुम्हें उस वर्तुल की आंतरिक अनुभूति हो सकती है, केवल तभी ऐक्य की आंतरिक अनुभूति हो सकती है। तब सिर्फ इसे स्मरण करो। आंखें बंद कर लो, ऐसे लेटे रहो जैसे तुम अपने साथी के साथ हो, केवल स्मरण करो, और इसे महसूस करना शुरू करो। तुम्हारा शरीर आंदोलित हो उठेगा और कंपने लगेगा।
ऐसा होने दो। भूल जाओ कि दूसरा वहां नहीं है। ऐसे हिलो-डुलो जैसे दूसरा उपस्थित है। केवल शुरू-शुरू में जैसे का भाव रहता है। एक बार जब तुम्हें पता चल जाता है कि यह जैसा नहीं है तब दूसरे की उपस्थिति यथार्थ बन जाती है। ऐसे व्यवहार करो जैसे यथार्थ में तुम काम-क्रीड़ा करने जा रहे हो। वे सब कुछ करो जो-जो तुमने अपने सहभागी के साथ किया होता। चीखो-चिल्लाओ, शरीर को हिलाओ-डुलाओ, कंपो। शीघ्र ही वर्तुल बन जाएगा- और यह वर्तुल चमत्कारी है। शीघ्र ही तुम महसूस करोगे कि वर्तुल निर्मित हो गया है। और अब यह वर्तुल स्त्री और पुरुष के संयोग से नहीं बना। अगर तुम पुरुष हो तो सारा अस्तित्त्व तुम्हारे लिए स्त्री हो गया है। अगर तुम स्त्री हो तो सारा अस्तित्त्व पुरुष हो गया है। अब अस्तित्त्व के साथ तुम्हारा गहरा संबंध जुड़ गया है, और अब द्वार अर्थात दूसरा वहां नहीं बचा।
दूसरा मात्र द्वार है। स्त्री को प्रेम करते समय तुम वास्तव में अस्तित्त्व को ही प्रेम कर रहे हो। स्त्री तो सिर्फ द्वार है, पुरुष भी सिर्फ द्वार है। दूसरा उस पूर्ण के लिए द्वार मात्र ही है। लेकिन तुम इतनी जल्दी में होते हो कि तुम्हें कभी इसकी अनुभूति नहीं होती। अगर घंटों तक तुम इस मिलन में, इस प्रगाढ़ आलिंगन में स्थित रहते हो, तो तुम दूसरे को भूल ही जाओगे और दूसरा पूर्ण का विस्तार ही हो जाएगा।
एक बार जान लेने पर, तुम इस विधि का अकेले प्रयोग कर सकते हो। और जब तुम इसका अकेले प्रयोग कर सको तो तुम्हें एक नई मुक्ति प्राप्त होती है- दूसरे से मुक्ति। सच, ऐसा ही होता है, सारा अस्तित्त्व दूसरा हो जाता है।- तुम्हारा प्रेमी, तुम्हारी प्रेमिका। और तब इस विधि का निरंतर प्रयोग किया जा सकता है। और व्यक्त्ति निरंतर अस्तित्त्व से जुड़ा रह सकता है।
और तब तुम इसका प्रयोग दूसरे आयामों में भी कर सकते हो। प्रातः काल की सैर करते समय भी कर सकते हो। तब तुम हवा के साथ, उदित होते हुए सूर्य के साथ, और आकाश के साथ और पेड़ों के साथ संपृक्त हो सकते हो, रात्रि में आकाश के सितारों की ओर निहारते समय इसे कर सकते हो। एक बार यदि तुम्हें पता चल जाए कि यह किस प्रकार घटिता होता है तो तुम सारे अस्तित्त्व के साथ काम-संभोग कृत्य कर सकते हो।
लेकिन यही उचित है कि पहले उसे मनुष्यों के साथ ही किया जाए क्योंकि वे तुम्हारे निकटतम हैं- अस्तित्त्व के निकटतम अंश। लेकिन उन्हें छोड़ा भी जा सकता है। तुम द्वार को छोड़ कर छलांग लगा सकते हो। और तुम रूपांतरित हो जाओगे, तुम नए हो जाओगे। तंत्र साधन की भांति काम का उपयोग करता है। यह शक्ति है, इसका साधन की भांति उपयोग हो सकता है। यह तुम्हें रूपांतरित कर सकती है, यह तुम्हें भावातीत अवस्था में पहुंचा सकती है।
लेकिन जिस ढंग से हम काम-वासना का उपयोग करते हैं, यह बात हमें मुश्किल मालूम होती है; क्योंकि हम इसका उपयोग बहुत गलत ढंग से करते हैं। और गलत ढंग प्राकृतिक नहीं होता, हमसे तो पशु ही अच्छे हैं। वे प्राकृतिक ढंग से इसका उपयोग करते हैं, हमारे ढंग अप्राकृतिक हैं, विकृत हैं। काम-वासना पाप है,

लगातार मन पर इस बात की चोट ने भीतर गहरे में काम के लिए अवरोध खड़ा कर दिया है। तुम कभी भी पूरी तरह स्वयं को इसके साथ बहने नहीं देते। कुछ भीतर ऐसा है जो हमेशा एक ओर किनारे पर खड़ा इसकी निंदा करता रहता है।
नई पीढ़ी युवा भी वे भले ही कहें कि वे यौन संबंधी वर्जनाओं के बोझ से मुक्त हैं, वे काम-ग्रस्त नहीं है, लेकिन तुम अपने अचेतन मन इतनी आसानी से इस बोझ से मुक्त नहीं कर सकते। सदियों-सदियों से इसे ऐसा बनाया गया है। इसके पीछे मनुष्य का पूरा इतिहास है। इसलिए चेतन मन से इसे पाप कह कर तुम भले ही इसकी निंदा न करो लेकिन अचेतन मन सदा इसकी निंदा करने के लिए वहां मौजूद है। तुम कभी भी इसमें समग्र रूप से इसमें नहीं होते। कुछ न कुछ अंश छूट ही जाता है। वह छूटा हुआ अंश सब विभाजित कर देता है।
तंत्र कहता है समग्रस्ता से इसमें संलग्न होओ। भूल जाओ स्वयं को, भूल जाओ, तुम्हारी संस्कृति, तुम्हारा धर्म, तुम्हारी सभ्यता तुम्हारे सिद्धांत- सब भूल जाओ। बस, समग्रस्ता से इसमें गति करो। कुछ भी मत बचाओ। बस पूरी तरह विचार शून्य हो जाओ। सिर्फ तभी तुम्हें पता चलता है कि तुम किसी के साथ एक हो गए हो।
और इसी एकात्मकता के भाव को अपने प्रेमी से हटाकर पूरे विश्व के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। तुम पेड़ों के साथ, चांद तारों के साथ किसी के भी साथ संभोग कर सकते हो। एक बार तुम्हें यह पता चल जाए कि किस प्रकार यह वर्तुल निर्मित किया जा सकता है तब यह किसी के साथ भी निर्मित किया जा सकता है- यहां तक कि बिना किसी के भी निर्मित हो सकता है।
तुम यह वर्तुल अपने ही भीतर निर्मित कर सकते हो, क्योंकि पुरुष दोनों है, स्त्री भी और पुरुष भी, और स्त्री भी पुरुष और स्त्री दोनों है। तुम दोनों हो क्योंकि तुम्हारा सृजन पुरुष और स्त्री दोनों के संयोग से हुआ है इसलिए तुम्हारा भाग दूसरा है। एक बार जब तुम्हारे भीतर यह वर्तुल बन जाता है- तुम्हारे पुरुष का तुम्हारी स्त्री से मिलन होता है- आंतरिक स्त्री का आंतरिक पुरुष से मिलन होता है- तुम अपने भीतर अपने से ही आलिंगन करते हो। और जब यह वर्तुल निर्मित हो जाता है तभी वास्तविक ब्रह्मचर्य उपलब्ध होता है। नहीं तो सभी प्रकार के ब्रह्मचर्य केवल विकृतियां है, और वे अपनी समस्याएं खड़ी कर लेते हैं।
यह वर्तुल जब अपने भीतर निर्मित हो जाता है, तुम मुक्त हो जाते हो। यही
तो तंत्र कहता हैः काम गहरे से गहरा बंध है, लेकिन फिर भी यह परम स्वतंत्रता का माध्यम बन सकता है। तंत्र कहता है, विष का भी औषधि के रूप में उपयोग किया जा सकता है- केवल बुद्धिमत्ता की जरूरत है।
इसलिए किसी की भी निंदा मत करो, बल्कि उसका उपयोग करो। और किसी का विरोध
मत करो। खोजो कि किस तरह उसका प्रयोग किया जा सकता है और कैसे रूपांतरण किया जा सकता है। तंत्र जीवन का गहरा, पूर्ण स्वीकार है। एक मात्र मार्ग- पूरी दुनिया में, उतनी सदियों में जितनी बीत चुकी है, तंत्र अनूठा है। वह कहता हैः किसी का भी परित्याग मत करो, किसी के भी विरुद्ध मत होओ और किसी से भी संघर्ष मत करो- क्योंकि कोई भी संघर्ष तुम्हारे स्व को नष्ट कर देगा।
सभी धर्म काम-वासना के विरोधी हैं, इससे भयभीत है, क्योंकि यह एक महाशक्ति है। अगर एक बार तुम इसकी पकड़ में आ गए तो बचोगे नहीं, और तब धारा तुम्हें कहीं भी बहाकर ले जाएगी, इसी कारण भय है। इसलिए अवरोध खड़े करो ताकि तुम और धारा दो हो जाओ! और इस प्रबल शक्ति को अपने ऊपर हावी मत होने दो- इसके स्वामी हो जाओ।
केवल तंत्र ही यह कहता है कि यह स्वामित्व एक झूठ, एक रोग सिद्ध होगा, क्योंकि वास्तव में तुम इस धारा से अलग नहीं हो सकते। तुम वही हो। इसलिए सभी विभाजन झूठ होंगे, अपनी मर्जी से किए होंगे। और मूलरूप से कोई विभाजन संभव नहीं है, क्योंकि तुम ही धारा हो- उसके अंगी-संगी, केवल उसकी एक लहर। तुम जमकर बर्फ हो सकते हो, और स्वयं को धारा से पृथक कर सकते हो, लेकिन यह जम जाना मृत्यु है। और मनुष्यता मुर्दा हो चुकी है। कोई यथार्थ रूप में जीवित नहीं

है- केवल धारा में बहते हुए मुर्दे। पिघलो। तंत्र कहता है, "पिघलने की चेष्टा करो।" हिमशैल की भांति मत बनो। पिघलो और नदी के साथ एक हो जाओ।
नदी के साथ एक होकर नदी के साथ एक हो जाने को अनुभव करते हु, उसी में विलीन हाते हुए, सजग हो जाओ, और रूपांतरण घटित होगा- रूपांतरण हो ही गया। रूपांतरण संघर्ष से नहीं होश से, सजगता से होता है।
ये तीनों विधियां बहुत ही वैज्ञानिक है, तब कामवासना वही नहीं रह जाती जिसे तुम जानते हो। तब वह कुछ समय के लिए मिलने वाली राहत नहीं है। तब वह ऊर्जा का बाहर फेंकना नहीं है। तब उसका कोई अंत नहीं है। तब वह ध्यानगत वर्तुल बन जाती है।

इसी से संबंधित कुछ और विधियांः
चौथी विधि- दीर्धकाल से बिछुड़े मित्र को प्रसन्नता पूर्वक देखते हुए, उस प्रसन्नता को व्याप्त हो जाने दो इस प्रसन्नता में प्रवेश करो और उसके साथ एक हो जाओ- किसी भी हर्ष के साथ, किसी भी सुख के साथ। यह तो एक उदाहरण है। दीर्ध काल से बिछुड़े मित्र को प्रसन्नता पूर्वक देखते हुए...
अचानक तुम अपने मित्र को देखते हो, जिसे कई दिनों या कई वर्ष से नहीं देखा था। अचानक एक प्रसन्नता तुम्हें घेर लेती है। लेकिन तुम्हारा ध्यान मित्र पर होगा, प्रसन्नता पर नहीं होगा, तब तुम कुछ चूक रहे हो। यह हर्ष क्षणिक है, और तुम्हारा ध्यान मित्र पर केंद्रित है। तुम बातें करने लगोगे, बीती बातों को याद करने लगोगे और तुम इस खुशी को चूक जाओगे और यह खुशी चली जाएगी।
जब तुम अपने किसी मित्र को देखते हो। और सहसा अपने हृदय में उमड़ती प्रसन्नता को अनुभव करते हो, उस प्रसन्नता पर चित्त को एकाग्र करो। उसे महसूस करो और वही हो जाओ। और मित्र से मिलते समय होशपूर्ण रहो और प्रसन्नता से भर जाओ। मित्र को परिधि पर रहने दो और तुम स्वयं खुशी की अनुभूति में केंद्रित हो जाओ।
ऐसा कई दूसरी परिस्थितियों में भी किया जा सकता है। सूर्य उदय हो रहा है,
और तुम सहसा महसूस करते हो कि तुम्हारे भीतर भी कुछ उदित हो रहा है। तब तुम सूर्य को भूल जाओ, उसे परिधि पर रहने दो। तुम अपने भीतर उठती हुई ऊर्जा की अनुभूति में केंद्रित हो जाओ। जैसे ही तुम उस पर ध्यान दोगे, वह फैलना शुरू हो जाएगी। वह तुम्हारा समूचा शरीर हो जाएगी, वह तुम्हारे पूरे प्राण हो जाएगी, और तुम केवल उसके द्रष्टा ही मत बने रहना- उसमें डूब जाना। बहुत कम ऐसी घड़ियां होती हैं जब तुम प्रसन्न होते हो, आनंदित होते हो। लेकिन हम उन्हें चूकते चले जाते हैं क्योंकि हम विषय में केंद्रित हो जाते हैं।
जब भी प्रसन्नता होती है, तुम्हें लगता है कि यह बाहर से आ रही है। तुमने मित्र को देखा है, निश्चित ही ऐसा प्रतीत होता है कि यह खुशी को देखने पर उससे मिल रही है। वास्तव में ऐसा नहीं है। प्रसन्नता का भाव सदा तुम्हारे भीतर विद्यमान है। मित्र तो केवल एक परिस्थिति बन गया है; मित्र इसे बाहर प्रकट करने में सहायक हुआ है, लेकिन वह पहले से ही वहां है। ऐसा केवल प्रसन्नता के साथ ही नहीं है, लेकिन क्रोध, उदासी, दुख, सुख- सबके साथ ऐसा ही है।
दूसरे केवल परिस्थितियां हैं जिनके कारण तुम्हारे भीतर जो भी छिपा है
वह प्रकट हो जाता है। वे कारण नहीं हैं, उनके कारण तुम्हारे भीतर कुछ नहीं हो रहा। जो कुछ भी हो रहा है वह तुम्हें ही हो रहा है। वह सदा से वहां था मित्र से यह मिलन एक परिस्थिति बन गया है जिसके कारण जो कुछ तुम्हारे भीतर था, वह प्रकट हो गया है। प्रच्छन्न स्रोतों से प्रकट होकर सामने आ गया है, साकार हो गया है।
जब भी ऐसा घटित हो अंतरानुभूति में केंद्रित रहो। और तब जीवन में सभी चीजों के प्रति तुम्हारे रुख में अंतर आ जाएगा। निषेधात्मक मनोभावों के साथ भी ऐसा ही करो। जब तुम क्रोध में हो, तुम उस व्यक्त्ति में केंद्रित मत हो जाना जिसके कारण क्रोध जगा है। उसे मन की परिधि पर ही रहने देना। तुम मात्र

क्रोध ही हो जाना, उसे उसकी समग्रस्ता में अनुभव करना, उसे अपने भीतर उठने देना। उसकी कोई बुद्धि-संगत व्याख्या मत करना; ऐसा मत कहना, "इस आदमी ने इसे उत्पन्न किया है।" उस आदमी को दोषी मत ठहराना। वह तो केवल एक परिस्थिति बन गया है। उसको धन्यवाद देना, कि जो भीतर छिपा था वह प्रकट हो गया है। उसने कहीं ऐसी चोट की है, घाव नहीं भीतर छिपा था। अब तुम्हें उसका पता है- घाव ही हो जाओ।
साकारात्मक या नकारात्मक, कोई भी मनोभाव हो, उसका उपयोग करो और तुम में
एक महान परिवर्तन होगा। अगर भाव निषेधात्मक है, इसके प्रति सजग होते ही कि यह तुम्हारे भीतर है, तुम उससे मुक्त हो जाओगे। अगर मनोभाव विधेयात्मक है, तुम वह भाव ही हो जाओगे। अगर यह हर्ष-उल्लास का भाव है, तुम हर्ष-उल्लास ही हो जाओगे। अगर यह क्रोध है तो क्रोध विलीन हो जाएगा।
और यही अंतर है विधेयात्मक और निषेधात्मक मनोभावों में। अगर तुम किसी विशेष मनोभाव के प्रति सजग हो जाओ, और यह मनोभाव सजगता के कारण विलीन हो जाए तो यह निषेधात्मक है। अगर किसी मनोभाव के प्रति सजग होने से, तुम वह मनोभाव ही हो जाते हो और वह मनोभाव फैलकर तुम्हारे प्राण बन जाता है, वह विधेयात्मक है।
सजगता, होश इन दोनों प्रकार के मनोभावों पर भिन्न-भिन्न रूप में काम करती है। अगर वह विषैला है, तो सजगता के कारण तुम उससे मुक्त हो जाते हो। अगर वह सुखपूर्ण है, आनंदपूर्ण है, तुम उसके साथ एक हो जाते हो, होश उसे गहरा बना जाता है।
इसलिए मेरी दृष्टि में यही माप दंड है, अगर तुम्हारे होश से कुछ गहरा होता है, वह शुभ है और अगर तुम्हारी सजगता के कारण कुछ विदा हो जाता है, वह अशुभ है। जो होश में बच नहीं पाता वह पाप है, और जो होश में विकसित होता है वह पुण्य है। पाप और पुण्य सामाजिक मान्यताएं नहीं हैं, वे आंतरिक बोध हैं। अपनी होश का उपयोग करो। यह ऐसे हैं- अगर अंधेरा है और तुम प्रकाश लाते हो, अंधेरा वहां नहीं टिकेगा। केवल भीतर प्रकाश लाते ही, अंधेरा विलीन हो जाएगा क्योंकि वास्तव में वह वहां था ही नहीं। वह नकारात्मक था, केवल प्रकाश की अनुपस्थिति। लेकिन बहुत-सी चीजें जो वहां थी वे साकार हो जाएंगी मात्र प्रकाश के लाते ही, ये शेल्फ, ये पुस्तकें, ये दीवारें।
अंधेरे में वे नहीं थी, तुम उन्हें देख नहीं पाए। अगर तुम प्रकाश भीतर लाते हो, अंधेरा तो वहां नहीं बचेगा, लेकिन जो वास्तव में वहां है, वह प्रकट हो जाएगा।

पांचवीं विधिः-खाते या पीते समय खाद्य या पेय पदार्थ का स्वाद ही हो जाओ
और भर जाओ।
हम चीजें खाए चले जाते हैं, हम उनके बिना जी नहीं सकते, लेकिन हम उन्हें बड़ी मूर्च्छा में, यंत्रवत, रोबोट की तरह खाए चले जाते हैं। हम उनका स्वाद नहीं लेते, बस ठूंसते चले जाते हैं। धीरे-धीरे खाओ और स्वाद के प्रति होश से भरो। और जब तुम धीरे-धीरे खाते हो तभी तुम्हें स्वाद का पता चलता है। चीजें केवल निगलते ही मत जाओ। उनका स्वाद लो, जल्दी मत करो, और स्वाद ही हो जाओ। तुम मिठास को अनुभव करो, मिठास ही हो जाओ। तब सारे शरीर में इसे अनुभव किया जा सकता है- केवल मुंह में नहीं, केवल जीभ पर ही नहीं। पूरे शरीर में स्वाद की अनुभूति होगी। एक विशेष मिठास की तरंगे फैल रही है... या किसी और की। जो भी तुम खा रहे हो उसके स्वाद को महसूस करो और स्वाद ही हो जाओ। यही कारण है कि तंत्र दूसरी धार्मिक परंपराओं के इतना उलट है।
जैन कहते हैं, "अस्वाद"। महात्मा गांधी के आश्रम में यही नियम थाः "अस्वाद, किसी चीज का स्वाद मत लो। खाओ पर स्वाद न लो, स्वाद को भूल ही जाओ। खाना एक आवश्यकता है, इसे यंत्रवत पूरा करो। स्वाद तृष्णा है, इसलिए स्वाद मत लो। तंत्र कहता है, "जितना संभव हो उतना स्वाद लो; ज्यादा से ज्यादा संवेदनशील बनो, जीवंत बनो।"

अस्वाद से तुम्हारी इंद्रियां मर जाएगी। उनकी संवेदन शक्ति कम होती जाएगी। और कम संवेदन शक्ति से तुम अपने शरीर को अनुभव नहीं कर सकोगे, तुम अपने अनुभूतियों को अनुभव न कर सकोगे। तब तुम कवेल विचारों में केंद्रित हो जाओगे। विचारों में केंद्रित होना खंडों में विभाजित हो जाना है।
तंत्र कहता है, "अपने भीतर कोई विभाजन मत निर्मित करो। स्वाद लेना, सुंदर है, संवेदनशील होना सुंदर है। जितने अधिक तुम संवेदनशील हो, अनुभवग्रही हो, उतने ही अधिक जीवंत हो जाओगे और जितने जीवंत हो उतना ही जीवन तुम्हारे अंतरतम में प्रवेश कर जाएगा। तुम अधिक खुल जाओगे।"
तुम बिना स्वाद लिए चीजें खा सकते हो, यह बहुत कठिन नहीं। ऐसा भी हो सकता
है कि तुम किसी को छूकर भी न छू सको, यह कठिन नहीं है। हम ऐसा ही कर रहे हैं। तुम किसी से हाथ मिलाते हो, बिना उसे स्पर्श किए, क्योंकि स्पर्श करने के लिए तुम्हें हाथों तक आना पड़ता है- जैसे तुम, तुम्हारी आत्मा हाथ में आ गई हो। सिर्फ तभी तुम स्पर्श कर सकते हो। तुम किसी का हाथ अपने हाथ में ले सकते हो और स्वयं को वहां से हटा सकते हो तब वहां एक मृत हाथ होगा। वह स्पर्श कर रहा है ऐसा प्रतीत होता है लेकिन वह स्पर्श नहीं कर रहा।
हम स्पर्श नहीं कर रहे! हम किसी को छूने से भी डरते हैं, क्योंकि छूना प्रतीकात्मक रूप से कामुकता है। तुम भीड़ में खड़े हो, ट्रेन में खड़े हो, कई लोगों से छू रहे हो, लेकिन तुम उन्हें नहीं छू रहे और न वे तुम्हें छू रहे हैं। केवल शरीर स्पर्शित हो रहें है, लेकिन तुम वहां से हट गए हो। तुम अंतर महसूस कर सकते हो। यदि भीड़ में तुम वास्तव में किसी को छू रहे हो तो वह बुरा मान जाएगा। तुम्हारा शरीर छू सकता है, लेकिन तुम्हें शरीर में नहीं होना चाहिए। तुम एक ओर अलग खड़े रहो, जैसे तुम शरीर में नहीं हो, केवल एक मृत शरीर छू रहा है।
यह संवेदनहीनता बुरी है। यह बुरी इसलिए है क्योंकि तुम जीवन के विपरीत अपना बचाव कर रहे हो। हम मृत्यु से इतना भयभीत है और सच्चाई यह है कि हम मरे ही हुए हैं। वैसे हमें भयभीत होने की जरूरत नहीं, क्योंकि कोई भी मरने वाला नहीं है- तुम पहले ही मरे हुए हो। और इसीलिए हम डरते हैं, क्योंकि हम जिए ही नहीं। हम जीवन को चूकते रहे हैं और मृत्यु आ रही है।
जो व्यक्ति जीवित है वह मौत से डरेगा नहीं, क्योंकि वह जीवन जी रहा है।
जब तुम सच्चे अर्थों में जी रहे हो, तब मौत का कोई डर नहीं। तुम मौत को भी जी सकते हो। जब मौत आएगी, तुम इतने संवेदी, इतने अनुभव ग्राही होओगे कि उसका भी आनंद उठा सकोगे। यह एक महान अनुभव होगा। अगर तुम जीवित व्यक्ति हो, तुम मौत को भी जी सकते हो, और तब मौत वहां होगी ही नहीं। अगर तुम मौत को भी जी सको, मर रहे शरीर के प्रति भी संवेदी हो सको, और तुम अपने केंद्र को लौट रहे हो, और विलीन हो रहे हो, अगर तुम इसको भी जी सको तो तुम अमर हो गए।
खाते या पीते समय, खाद्य या पेय पदार्थ का स्वाद ही हो जाओ और भर जाओ... और स्वाद से भर जाओ पानी पीते समय ठंडक को महसूस करो। अपनी आंखें बंद कर लो... धीरे-धीरे पीओ... स्वाद लो। ठंडक महसूस करो और महसूस करो कि तुम ठंडक ही हो गए हो- क्योंकि पानी से ठंडक तुम तक पहुंच रही है। वह तुम्हारे शरीर का अंग बन रही है। तुम्हारे ओंठ इसे स्पर्श कर रहे हैं, तुम्हारी जिह्वा इसे छू रही है और ठंडक पहुंच रही है। इसे सारे शरीर में होने दो। इसकी तरंगों को फैलने दो, और तुम सारे शरीर में एक ठंडक अनुभव करोगे। इस तरह तुम्हारी संवेदनशीलता बढ़ सकती है; और तुम अधिक जीवंत हो सकते हो और ज्यादा भर सकते हो।
हम कुंठित व्यक्ति हैं, एक खालीपन महसूस करते हैं, और कहे चले जाते हैं
कि जीवन खोखला है। लेकिन हम ही इस खालीपन के जिम्मेवार हैं। न तो हम इसे भर रहे हैं और न ही इसे भरने देते हैं। हमने सुरक्षा के लिए एक कवच पहन रखा है, हम असुरक्षित होने से डरते हैं, इसलिए हम अपने को सबसे बचाते चले जाते हैं। और तब हम एक कब्र बन कर रह जाते हैं- एक मृत वस्तु।
तंत्र कहता है, "जीवंत बनो, अधिकाधिक जीवंत क्योंकि जीवन ही परमात्मा है। जीवन के अतिरिक्त और कोई परमात्मा नहीं है। अधिकाधिक जीवंत बनो और तुम

और अधिक दिव्य हो जाओगे। समग्र रूपेण जीओ और तब तुम्हारे लिए कोई मृत्यु नहीं होगी।"

तंत्र, अध्यात्म और काम
पांचवां प्रवचन

तंत्र के माध्यम से परम संभोग

इससे पहले कि मैं तुम्हारा प्रश्न लूं कुछ और बातें स्पष्ट हो जानी चाहिए, क्योंकि उनसे तंत्र को समझने में और मदद मिलेगी। तंत्र कोई नैतिक धारणा नहीं है। न तो वह नीति है, न अनीति- वह नीति से परे है। तंत्र विज्ञान है- विज्ञान वे दोनों ही नहीं। तुम्हारी नैतिकताएं और नैतिक आचरण संबंधी धारणाएं तंत्र के लिए अप्रासंगिक हैं। कोई किसी तरह का आचरण करे, तंत्र का इससे कुछ संबंध नहीं। उसका आदर्शों से कुछ संबंध नहीं। उसका संबंध क्या है और तुम क्या हो, इससे है। इस फर्क को गहराई से समझ लेना जरूरी है।
नैतिकता का संबंध आदर्शों से है- तुम्हें कैसा होना चाहिए, तुम्हें क्या होना चाहिए। इसलिए नैतिकता मूल रूप से निंदा है। तुम आदर्श व्यक्ति नहीं हो इसलिए तुम निंदित होते हो। प्रत्येक नैतिकता अपराध-भाव पैदा करती है। तुम कभी आदर्श नहीं हो पाते, तुम पीछे ही पीछे रह जाते हो। तुममें और आदर्शों में सदा फासला बना रहता है, क्योंकि आदर्श होना असंभव है। और नैतिकता के माध्यम से और भी असंभव है। आदर्श कहीं भविष्य में है और तुम यहां हो, जैसे भी हो; और तुम तुलना किये जाते हो। तुम पूर्ण पुरुष नहीं हो पाते, कुछ न कुछ कमी है। तुममें अपराध-भाव उत्पन्न होता है, तुम आत्म ग्लानि से भर जाते हो।
एक बातः तंत्र निंदा-भाव के विरुद्ध है क्योंकि निंदा का भाव तुम्हें कभी रूपांतरित नहीं कर सकता, बल्कि मिथ्याचार हिपोसी को जन्म देता है। इसलिए तुम जो नहीं हो उसे दिखाने का प्रयत्न करते हो। मिथ्याचार का अर्थ हैः तुम आदर्श नहीं यथार्थ हो, लेकिन तुम आदर्श व्यक्त्ति होने का ढोंग रच रहे हो। तब तुम भीतर विभाजित हो जाते हो, तब तुम्हारे पास एक दिखावटी चेहरा होता है। तब एक नकली, झूठे व्यक्ति का जन्म होता है, और तंत्र असली, वास्तविक व्यक्ति की खोज है, अवास्तविक, व्यक्ति की नहीं।
प्रत्येक नैतिकता आवश्यकतावश मिथ्याचार को जन्म देती है। ऐसा होगा ही। नैतिकता के साथ मिथ्याचार और पाखंड तो रहेगा ही। यह इसका अंग है, इसकी प्रतिच्छाया है। यह विरोधाभासी लगता है। नीतिवादी ही पाखंड की सबसे अधिक भर्त्सना करते हैं और वे ही इसके जन्मदाता भी हैं। और जब तक नैतिकता इस दुनिया से विदा नहीं हो जाती तब तक पाखंड समाप्त नहीं हो सकता। उन दोनों का अस्तित्त्व एक साथ बना रहेगा। ये एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। क्योंकि नैतिकता तुम्हें आदर्श देती है। और तुम आदर्श नहीं हो, इसलिए तुम्हें आदर्श दिये जाते हैं। तुम्हें ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे तुम गलत हो। और वह गलत प्राकृतिक है, वह तुम्हें दिया गया है, उसके साथ ही तुम्हारा जन्म हुआ है और उसके साथ तुम इतनी जल्दी कुछ कर भी नहीं सकते। तुम उसे रूपांतरित भी नहीं कर सकते यह इतना सरल नहीं है। तुम उसका दमन कर सकते हो, यह सरल है।
इसलिए तुम दो बातें कर सकते हो, तुम नकली चेहरा लगा सकते हो, तुम जो नहीं
हो उसका अभिनय कर सकते हो। इससे तुम्हारा बचाव हो सकता है। समाज में तुम अधिक सुविधा से जी सकते हो। और भीतर तुम असली को दबाकर रख सकते हो, क्योंकि असली का दमन करके ही नकली को थोपा जा सकता है। इस तरह असलियत गहरे और गहरे अचेतन तल में उतरती चली जाती है और कृत्रिमता तुम्हारे चेतन तल पर उभर आती है। तुम्हारा कृत्रिम रूप प्रकट होकर सामने आ जाता है और वास्तविक रूप पीछे हटता जाता है। तुम विभाजित हो जाते हो, जितना अधिक छिपाने का प्रयत्न करते हो उतना ही अंतराल बढ़ता जाता है।
बच्चा जब पैदा होता है, वह अखंड होता है। इसी कारण प्रत्येक बच्चा इतना सुंदर दिखाई देता है। सौंदर्य संपूर्णता के कारण है। बच्चे में कोई अंतराल नहीं, कोई खंड नहीं, कोई विभाजन नहीं। बच्चा एक है। असली और नकली दो नहीं हैं। वह प्रामाणिक है, बस केवल वास्तविक है। तुम यह नहीं कह सकते कि बच्चा नैतिक

है, वह न तो नैतिक है और न ही अनैतिक है। नीति और अनीति का उसे कुछ बोध नहीं। जैसे ही उसे ज्ञात होता है, विभाजन शुरू हो जाता है। तब बच्चा कृत्रिम ढंग से आचारण करने लगता है, क्योंकि वास्तविक होना कठिन से कठिनतर हो जाता है। स्मरण रहे, ऐसा जरूरत के कारण होता है, क्योंकि परिवार को एक व्यवस्था देनी पड़ती है, माता पिता को नियम देने पड़ते हैं। बच्चे को सभ्य बनाना है, शिक्षित करना है, उसके आचार-व्यवहार को शिष्ट करना है, परिष्कृत करना है, नहीं तो बच्चे का इस समाज में रहना असंभव हो जाएगा। उसे बताना पड़ता है, "यह करो, वह मत करो" और जब हम कहते हैं, "यह करो" हो सकता है बच्चे की प्रकृति उसे करने के लिए तैयार ही न हो। हो सकता है वह अप्राकृतिक हो। हो सकता है उसे करने की नैसर्गिक इच्छा बच्चे में न हो। और जब हम कहते हैं, "यह मत करो, वह मत करो" बच्चे की प्रकृति उसे करना चाहती है।
हम प्राकृतिक की निंदा करते हैं और कृत्रिम को बलपूर्वक थोपते चले जाते हैं क्योंकि इस ढोंगी समाज में झूठ ही सहायक होगा। जहां सब झूठे और पाखंडी हैं वहां नकलीपन से सुविधा होगी। सत्य से काम नहीं बनेगा। एक असली बच्चे को समाज में कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा; क्योंकि सारा समाज झूठा है, नकली है। यह एक दुष्च है। हम किसी समाज में पैदा होते हैं और इस धरती पर आज तक कोई ऐसा समाज नहीं हुआ जो प्राकृतिक हो। यह दुष्ट है। एक बच्चा समाज में पैदा होता है, और समाज के पास पहले ही कुछ निश्चित नियम हैं, आचरण हैं, नैतिकताएं हैं... बच्चे को सब सीखना पड़ेगा।
जब बच्चा बड़ा होगा वह झूठा और नकली हो जाएगा। और फिर उसके बच्चे होंगे,
और फिर वह उनको झूठ, नकली होने में सहायता देगा, और इस तरह चलता जाता है। क्या किया जाए? समाज को हम बदल नहीं सकते। यदि समाज को बदलने का प्रयत्न करते हैं, और जब समाज बदल जाएगा, तब हम नहीं रहेंगे। इसमें अनंत समय लग जाएगा। फिर क्या करें?
मनुष्य व्यक्तिगत रूप से अपने भीतर इस विभाजन के प्रति सजग हो सकता है,
कि वास्तविक को भीतर दबा दिया गया है और अवास्तविक को बाहर से थोप दिया गया है। यही पीड़ा है, दुख है, नरक है। तुम्हें इस अवास्तविक के द्वारा कोई तृप्ति नहीं होगी, क्योंकि झूठ के द्वारा झूठा संतोष ही प्राप्त हो सकता है। केवल सत्य के द्वारा ही वास्तविक संतोष मिल सकता है। झूठ के द्वारा तुम भ्रम में पड़ सकते हो, और सपनों में खो सकते हो। और सपनों के द्वारा तुम सव्यं को धोखा दे सकते हो, लेकिन संतुष्ट नहीं हो सकते।
उदाहरण के लिए, सपने में अगर तुम्हें प्यास लगती है, तो तुम सपने में यह सपना भी देख सकते हो कि तुम पानी पी रहे हो। यह नींद को बनाए रखने के लिए सुविधापूर्ण और सहयोगी हो सकता है। यदि तुम सपने में पानी पीने का सपना नहीं देख रहे तो नींद टूट जाएगी। प्यास वास्तविक है। उससे नींद टूट जाएगी, नींद में खलल पड़ जाएगा। सपना मदद करता है, वह तुम्हें ऐसा एहसास देता है कि तुम पानी पी रहे हो, लेकिन पानी वास्तव में है नहीं। तुम्हारी प्यास को धोखा हो रहा है, प्यास बुझ नहीं रही। हो सकताहै तुम सोये रहो, लेकिन प्यास वहां है, दबी हुई।
यह केवल नींद में ही नहीं घट रहा- बल्कि हमारे सारे जीवन में यही हो रहा है। तुम अपने उस झूठे व्यक्तित्व के द्वारा उन चीजों को पाने की चेष्टा कर रहे हो जो हैं नहीं, मात्र दिखावा हैं। अगर तुम उन्हें प्राप्त नहीं कर पाते तो भी दुखी होते हो; अगर वे मिल जाती हैं तो भी दुख ही हाथ लगता। अगर वे तुम्हें नहीं मिलती तो दुख कम होगा, इसे स्मरण रखना। अगर वे तुम्हें मिल जाती हैं, तो दुख और सघन हो जाएगा।
मनोवैज्ञानिको का कहना है कि कृत्रिम व्यक्तित्व के कारण हम वास्तव में, लक्ष्य तक पहुंचना ही नहीं चाहते- कभी पहुंचना नहीं चाहते, क्योंकि अगर तुम अपनी मंजिल तक पहुंच गए, तो तुम बिल्कुल घबरा जाओगे, कुंठित हो जाओगे। हम आशा में जीते हैं। आशा में ही हमारा अस्तित्त्व बना रहता है। आशा सपना है।

तुम कभी लक्ष्य तक नहीं पहुंचते, इसलिए तुम कभी नहीं जान पाते कि लक्ष्य असत्य था।
निर्धन व्यक्ति धन पाने के लिए संघर्ष कर रहा है, वह इस संघर्ष में अधिक प्रसन्न है; क्योंकि आशा बनी है। और झूठे व्यक्तित्व के साथ आशा ही एक मात्र खुशी है। यदि निर्धन को धन-दौलत मिल जाए तो वह निराश हो जाएगा। और इसका स्वाभाविक परिणाम होगा- कुंठा, फ्रस्ट्रेशन। धन है पर तृप्ति नहीं है। लक्ष्य तक तो पहुंच गया वह, लेकिन हुआ कुछ भी नहीं, उसकी सभी आशाएं मिट्टी में मिल गई। यही कारण है कि जब कोई समाज समृद्ध हो जाता है, वह विक्षुब्ध और अशांत हो जाता है।
अगर अमरीका आज इतना अशांत है तो इसलिए कि आशाएं-अकांक्षांएं पूरी हो गई हैं, मंजिल पा ली है, और अब तुम अपने को और झुठला नहीं सकते। इसलिए अगर अमरीका की युवा पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के सभी लक्ष्यों के प्रति विद्रोह कर रही है, तो इसका कुल कारण हैः कि वे सभी मूढ़तापूर्ण सिद्ध हो चुके हैं।
भारत में यह बात हमारी समझ में नहीं आती। हम यह सोच भी नहीं सकते कि युवा पीढ़ी स्वेच्छा से गरीब बन रही है, हिप्पी- अपनी इच्छा से गरीब हो जाना! हम इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। हम अभी भी आशावान हैं। हम भविष्य में आशा कर रहे हैं कि किसी दिन हमारा देश भी धनी होगा और तब यहां स्वर्ग होगा। स्वर्ग हमेशा आशा में है।
नकली व्यक्तित्व के कारण, जो भी कोशिश करोगे, जो भी करोगे, जो भी खोजोगे-
सब नकली हो जाएगा। तंत्र कहता है, "सत्य तुम पर प्रकट हो सकता है अगर तुम फिर से अपनी जड़ें वास्तविकता में, सत्य में जमा पाओ।" लेकिन वास्तविकता में जड़ें जमाने के लिए तुम्हें बहुत साहस जुटाना पड़ेगा, क्योंकि झूठ अति सुविधाजनक है, तुम्हारा मन इतना संस्कारित है कि असलियत से भयभीत हो जाएगा।
किसी ने पूछा है कि कल आपने कहा कि संभोग का सुख पाने के लिए, उसका आनंद लेने के लिए, उसमें टिके रहने के लिए, उसे समग्रस्ता से पूरी करो और जब शरीर हिलने-डुलने लगे, तो हिलना-डुलना ही हो जाओ। इसलिए किसी ने पूछा है, "आप हमें क्या सिखा रहे हैं- भोग, असक्ति? यह तो विकृति है।" यह तुमसे तुम्हारा नकली व्यक्तित्व बोल रहा है।
नकली व्यक्तित्व हमेशा भोग के विरुद्ध है। वह हमेशा तुम्हारे विरुद्ध है। तुम्हें प्रसन्न नहीं होना चाहिए। वह हमेशा त्याग के पक्ष में है- स्वयं का त्याग करो, दूसरों के लिए अपना त्याग करो। ऊपर से देखने पर यह बात बहुत सुंदर मालूम होती है, क्योंकि हम ऐसी ही मान्यताओं के साथ बड़े हुए हैंः "दूसरों के लिए अपना त्याग करो- यह परार्थ है, परोपकार है। अगर तुम स्वयं को खुश करने का प्रयत्न करते हो तो यह स्वार्थ है।" और जैसे ही कोई कहता है कि यह स्वार्थ है, पाप की भावना पैदा हो जाती है।
लेकिन मैं तुमसे कहता हूं, तंत्र का ढंग मूल रूप से भिन्न है। तंत्र कहता है, "जब तक तुम स्वयं प्रसन्न नहीं हो, आनंदित नहीं हो, दूसरों को प्रसन्न करने में, आनंदित होने में मदद नहीं कर सकते। जब तक तुम वास्तव में अपने से संतुष्ट नहीं हो, तुम दूसरों की सेवा नहीं कर सकते; तुम दूसरों को संतुष्ट होने में सहायक नहीं हो सकते। जब तक तुम स्वयं आनंद से परिपूर्ण नहीं, तुम समाज के लिए खतरा हो, क्योंकि जो आदमी हमेशा दूसरों के लिए त्याग करता है, वह आत्मपीड़ित बन जाता है।" अगर तुम्हारी मां निरंतर यही कहती रहे कि, "मैंने तुम्हारे लिए कितना त्याग किया है" तो तुम्हारे लिए वह यातना बन जाएगी। अगर पति पत्नी से यही कहता रहे कि, "मैं त्याग कर रहा हूं," तो वह आत्मपीड़ा से अपनी पत्नी को सता रहा है।
त्याग दूसरे को यातना देने की चाल है।
इसलिए जो हमेशा त्याग कर रहे हैं वे बहुत खतरनाक हैं। उनसे बचना, और त्याग मत करना। यह शब्द ही भद्दा है। स्वयं को प्रसन्न करो, उत्सव मनाओ, आनंद से भर जाओ, और जब तुम आनंद से इतना भर जाओ कि वह छलकने लगे, तब वह आनंद दूसरों तक पहुंच ही जाएगा। लेकिन सह त्याग नहीं होगा। तुमने किसी का उपकार नहीं

किया, किसी को तुम्हें धन्यवाद देने की जरूरत नहीं; बल्कि तुम उन सबके प्रति कृतज्ञता प्रकट करोगे, क्योंकि वे तुम्हारे आनंद में भागीदार बने। त्याग, सेवा, कर्तव्य जैसे शब्द कुरूप हैं, हिंसक हैं।
तंत्र कहता है, "जब तक तुम स्वयं प्रकाश से नहीं भर जाते, तुम दूसरों को प्रकाशित होने में कैसे सहायक होओगे?" स्वार्थी हो जाओ- तभी, केवल तभी परार्थी हो सकोगे; नहीं तो परार्थ, परोपकार की धारणा मूर्खतापूर्ण है। आनंदित होओ- तभी तुम दूसरों को आनंदित होने में सहायता दे सकोगे। अगर तुम उदास हो, दुखी हो, कड़वाहट से भरे हो, तुम निश्चित ही दूसरे के प्रति हिंसक हो जाओगे और दूसरों के लिए दुख पैदा करोगे।"
तुम महात्मा बन सकते हो, यह बहुत कठिन नहीं है। लेकिन अपने साधु- माहात्मओं को जरा देखो। वे अपने पास आने वालों को हर तरह से सताने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन उनके सताने का ढंग ऐसा है कि तुम धोखा खा जाते हो। वे तुम्हें सताते हैं, तुम्हारे लिए; वे तुम्हें यातना देते हैं, तुम्हारी भलाई के लिए। क्योंकि वे स्वयं को जो यातना दे रहे हैं। तुम यह कहने की हिम्मत नहीं कर सकते कि, आप हमें उसकी शिक्षा दे रहे हैं, जिसका आप स्वयं अनुसरण नहीं करते। वे पहले ही से इसका अन्याय कर रहे हैं, वे अपने को सता रहे हैं, पीड़ा दे रहे हैं, अब वे तुम्हें भी यातना दे सकते हैं। और जब वह यातना तुम्हें तुम्हारी भलाई के लिए दी जा रही है, तब वह बहुत खतरनाक है- तुम उससे बच नहीं सकते।
स्वयं को प्रसन्न रखने में क्या बुराई है? सुखी होने में क्या बुराई है? अगर कुछ बुराई है तो वह तुम्हारे दुखी होने में है, क्योंकि दुखी व्यक्ति अपने चारों ओर दुख की तरंगें निर्मित कर लेता है। आंनदित होओ और काम-कृत्य, आनंद प्राप्त करने का गहरे से गहरा उपाय हो सकता है।
तंत्र कामुकता नहीं सिखाता। वह तो केवल यही कहता है कि काम महा सुख का स्रोत हो सकता है। एक बार जब तुम्हें उस महासुख का पता चल जाता है, तुम आगे बढ़ सकते हो, क्योंकि अब तुम सत्य की भूमि पर खड़े हो। व्यक्ति को सदा काम में नहीं अटके रहना बल्कि, काम का तालाब में कूदने के लिए जंपिंग बोर्ड की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है। तंत्र का यही अभिप्राय हैः "तुम इसे जंपिंग बोर्ड समझो।" और जब एक बार तुम्हें काम-सुख का अनुभव हो जाए, तुम समझ सकोगे कि रहस्यदशद्र किस की बात करते रहे हैं- एक परम संभोग की, एक ब्रह्मांडीय संभोग की।
मीरा नाच रही है। तुम उसे समझ न पाओगे। तुम उसके गीतों को भी समझ न पाओगे। वे कामुकता पूर्ण हैं- उनमें काम-प्रतीक हैं। ऐसा होगा ही, क्योंकि आदमी के जीवन में संभोग ही एक ऐसा कृत्य है जिसमें अद्वैत की प्रतीति होती, जिसमें तुम एक गहन-ऐक्य अनुभव करते हो, जिसमें अतीत मिट जाता है, और भविष्य खो जाता है और बचता केवल वर्तमान- केवल सत्य, वास्तविक क्षण।
इसलिए उन सभी रहस्यदर्शियों ने, जिन्हें परमात्मा के साथ संपूर्ण अस्तित्त्व के साथ एक हो जाने की अनुभूति हुई है, उन्होंने अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए काम-प्रतीकों का उपयोग किया है। और कोई दूसरे प्रतीक नहीं हैं, और कोई भी प्रतीक इतने निकट नहीं हैं।
काम केवल प्रारंभ है, अंत नहीं। लेकिन अगर तुम प्रारंभ को ही चूक गए तो अंत को भी चूक जाओगे। और तुम अंत तक पहुंचने के लिए आरंभ से बच नहीं सकते। तंत्र कहता है, "जीवन को उसके प्राकृतिक रूप में, सत्य रूप में ग्रहण करो। अप्राकृतिक, झूठ मत होओ। काम-वासना है, एक गहनतम संभावना, उसका उपयोग करो। उसका सुख लेने में क्या बुराई है?" वास्तव में, सभी नैतिकताएं प्रसन्नता-विरोधी हैं। कोई व्यक्ति प्रसन्न है, तो तुम्हें लगता है कि जरूर कहीं कुछ गलत है। जब कोई उदास है, तब सब ठीक है। हम एक स्नायु-रोग-ग्रस्त समाज में जीते है, जहां हर व्यक्ति उदास है। जब तुम उदास हो, दुखी हो, तब सब प्रसन्न है; क्योंकि अब सबको तुमसे सहानुभूति प्रकट करने का अवसर मिलेगा। जब तुम प्रसन्न हो तो उनको समझ नहीं आएगा कि वे क्या करें? जब कोई तुमसे सहानुभूति

प्रकट करता है, तब उसका चेहरा देखना। चेहरे पर एक चमक होती है, एक सूक्ष्म चमक चेहरे पर आ जाती है। वह सहानुभूति दिखाते समय प्रसन्न है। अगर तुम खुश हो, तब कोई संभावना नहीं- तुम्हारी प्रसन्नता दूसरों को उदास कर देती है। यह स्नायुरोग, न्यूरोसिस है। इसका आधार ही पागलपन है।
तंत्र कहता है, "तुम जो हो, प्रामाणिक रूप से वही हो जाओ। तुम्हारी प्रसन्नता बुरी नहीं, अच्छी है। वह पाप नहीं। केवल उदासी पाप है, केवल दुखी होना पाप है। प्रसन्न होना पुण्य है, क्योंकि एक प्रसन्न और प्रफुल्लित व्यक्ति ही दूसरों के लिए दुख पैदा नही करेगा। केवल प्रफुल्लित और प्रसन्न व्यक्ति ही दूसरों की प्रसन्नता के लिए भूमि तैयार कर सकता है।"
दूसरी बात- जब मैं कहता हूं तंत्र न तो नैतिक है और न ही अनैतिक, तो मेरा मतलब है, तंत्र बुनियादी रुप से विज्ञान है। वह तुममें वही देखता है, जो तुम हो। तंत्र तुम्हें वास्तविकता के माध्यम से रूपांतरित करना चाहता है। तंत्र और नैतिकता में उतना ही अंतर है जितना जादू और विज्ञान में है। जादू भी चीजों का रूप बदल देता है, लेकिन बिना तथ्यो को जाने केवल शब्दो के द्वारा ही रूपांतरित करता है। एक जादूगर कह सकता है कि अब वर्षा बंद हो जाएगी। वास्तव में, वह बंद नहीं हो सकती। या वह कहेगा अब वर्षा होने लगेगी। वह वर्षा करवा नहीं सकता। वह केवल शब्दों का उपयोग कर सकता है।
कभी-कभी संयोग से हो सकता है कि ऐसा हो जाए और तब वह समझने लगेगा कि उसके पास कोई विशेष शक्ति है। और यदि उसकी जादुई भविष्यवाणी के अनुसार कोई बात घटित नहीं होती तो वह हमेशा बहाना बना सकता है "कहां गलती हुई है?" उसकी भविष्यवाणी में इस बात की संभावना तो छिपी ही रहती है। जादूगरी में बात "यदि" से ही शुरू होती है। वह कह सकता है यदि यहां सभी पुण्यात्मा विद्यमान हैं, तब इस विशेष दिन वर्षा होगी। यदि वर्षा हो गई तब तो ठीक है, और यदि वर्षा न हुई तो सभी पुण्यात्मा नहीं हैं। इनके बीच जरूर कोई पापी है।
इस सदी में, इस बीसवीं सदी में, जब बिहार में अकाल पड़ा तब महात्मा गांधी जैसे व्यक्ति ने भी यह कहा, "बिहार के लोगों के पापों के कारण अकाल पड़ा है" जैसे सारा संसार तो कोई पाप कर ही नहीं रहा केवल बिहार ही कर रहा है। जादू यदि से शुरू होता है और वह यदि बहुत बड़ा है।
विज्ञान कभी यदि से आरंभ नहीं करता, क्योंकि विज्ञान पहले यह जानने की कोशिश करता है कि असलियत क्या है? एक बार जब वास्तविक को जान लिया जाता है तब उसे रूपांतरित भी किया जा सकता है। एक बार जब पता चल जाए कि बिजली क्या है? उसे परिवर्तित किया जा सकता है, उसे रूपांतरित किया जा सकता है, उसका उपयोग किया जा सकता है। जादूगर को यह पता नहीं कि बिजली क्या है? बिना बिजली को जाने वह उसे रूपांतरित करने की बात सोच रहा है! वे भविष्यवाणियां झूठ हैं, केवल भ्रम हैं।
नैतिकता केवल जादू की भांति है। वह पूर्ण मानव की बात ही किए जाती है, बिना यह जाने कि आदमी है क्या- असली आदमी। पूर्ण मानव एक स्वप्न मात्र बनकर रह जाता है। उसका उपयोग सिर्फ वास्तविक मनुष्य की निंदा करने के लिए किया जाता है। मनुष्य कभी वहां तक पहुंच नहीं पाता।
तंत्र विज्ञान है। तंत्र कहता है, "पहले जानो कि यथार्थ क्या है, वास्तविकता क्या है, आदमी क्या है? और पहले से मूल्य निर्धारित मत करो और आदर्श मत स्थापित करो, पहले उसे जानो जो है। जो होना चाहिए उसके संबंध में मत सोचो, जो है केवल उसके संबंध में सोचो।" और जब एक बार उसे जान लिया जाता है, जो है, तब तुम उसे रूपांतरित भी कर सकते हो। अब तुम रहस्य समझ गए।
उदाहरण के लिए तंत्र कहता है, "काम के विरुद्ध जाने की चेष्टा मत करो, क्योंकि अगर तुम काम के विरुद्ध जाकर ब्रह्मचर्य को, पवित्रता को साधने की कोशिश करते हो, तो यह असंभव है। यह मात्र जादू की भांति है। बिना यह जाने कि काम-ऊर्जा क्या है, बिना यह जाने कि काम-वासना की उत्पत्ति किस प्रकार होती है, बिना उसकी प्रकृति की गहराई में गए, बिना उसके रहस्य को जाने, तुम ब्रह्मचर्य का एक आदर्श अवश्य स्थापित कर सकते हो, लेकिन तुम क्या करोगे?"

तुम केवल दमन करोगे। और जो व्यक्ति इसका दमन करता है वह उस व्यक्ति से अधिक कामुक है जो इसका भोग करता है;, क्योंकि भोग से ऊर्जा शांत हो जाती है, क्योंकि दमन से वह तुम्हारे शरीर-तंत्र में निरंतर संचार करती रहती है।
जो व्यक्ति काम, सेक्स को दबाना शुरू कर देता है उसे सर्वत्र काम ही काम दिखाई देने लगता है। हर चीज कामुक हो जाती है। ऐसा नहीं है कि हर चीज कामुक है, लेकिन अब वह प्रक्षेपण कर रहा है। अब वह प्रक्षेपण करता है। उसकी अपनी प्रच्छन्न ऊर्जा ही प्रक्षेपित हो रही है। उसे सब जगह काम ही दिखाई पड़ेगा। क्योंकि वह स्वयं को धिक्कार रहा है, वह हर किसी को धिक्कारने लगेगा, निंदा करने लगेगा। तुम एक भी ऐसा नीतिवादी न खोज सकोगे जो हिंसात्मक रूप से निंदा न करता हो, सब की निंदा न करता हो- सभी गलत हैं। ऐसा करना उसे अच्छा लगता है, उसके अहंकार की पुष्टि होती है। लेकिन हर कोई गलत क्यों है? क्योंकि सबमें उसे वही दिखाई देता है जिसका उसने दमन किया है। उसका चित्त और और कामुक होता जाएगा, और वह और और भयभीत होता जाएगा। यह ब्रह्मचर्य विकृति है, अप्राकृतिक है।
तंत्र का अनुसरण करने वाले साधक पर भिन्न प्रकार के गुणों से युक्त एक भिन्न प्रकार का ब्रह्मचर्य घटित होता है। लेकिन उसकी प्रक्रिया बिल्कुल इसके विपरीत है। तंत्र पहले यह सिखाता है कि किस प्रकार काम, सेक्स में किस प्राकर गति करनी है, कैसे इसे जाना है, कैसे इसे महसूस करना है और कैसे उसकी अप्रकट गहनतम संभावनाओं को प्रकट करना है, कैसे इसकी चरम सीमाओं तक पहुंचना है- किस प्रकार इसमें छिपे अनिवार्य सौंदर्य, अनिवार्य सुख और आनंद की खोज करनी है।
एक बार जब उसका रहस्य जान लेने पर तुम उसके पार हो सकते हो, क्योंकि वास्तव में गहन संभोग के क्षणों में जो आनंद मिलता है वह काम-वासना के कारण नहीं मिलता, वह बिल्कुल ही दूसरे कारण से प्राप्त होता है काम-वासना मात्र एक परिस्थिति है। वह कुछ और ही है जिससे तुम्हें महासुख मिल रहा है। वह कुछ तीन तत्त्वों में बांटा जा सकता है। लेकिन जब मैं उन तीन तत्त्वों का वर्णन करूंगा तो तुम ऐसा मत मान लेना कि तुम उन्हें समझ सकते हो। वे तुम्हारे अनुभव का हिस्सा बन जाने चाहिए। सिद्धांत रूप में वे निरर्थक हैं। काम के इन तीन मूलभूत तत्त्वों के कारण तुम आनंद के उस क्षण तक पहुंचते हो।
वे तीन तत्त्व हैंः-
पहलाः समय-शून्यता, टाइमलेसनेस तुम समय का पूरी तरह अतिक्रमण कर जाते हो, तुम समय के पार हो जाते हो। वहां कोई समय नहीं। तुम समय को बिल्कुल भूल जाते हो, तुम्हारे लिए समय रुक जाता है। ऐसा नहीं कि समय रुक जाता है तुम्हारे लिए रुक जाता है। तुम समय में नहीं हो। कोई अतीत नहीं, कोई भविष्य नहीं। इस क्षण में, यहीं और अभी, सारा अस्तित्त्व सिमट गया है। यही क्षण वास्तविक हो जाता है। अगर तुम इस क्षण बिना काम के वास्तविक क्षण बना सको तब काम-भोग की कोई आवश्यकता नहीं। ध्यान से ऐसा हो सकता है।
दूसराः काम में पहली बार तुम्हारा अहंकार खो जाता है, तुम निरंहकार हो जाते हो। इसलिए वे सभी जो महा अहंकारी हैं वे काम के बहुत विरुद्ध हैं, क्योंकि काम में उन्हें अपना अहंकार छोड़ना पड़ता है। न तुम वहां हो और न ही दूसरा वहां है। तुम और तुम्हारा प्रेमी दोनों ही किसी और में ही खो जाते हैं। एक नया सत्य सामने आता है, एक नई इकाई अस्तित्त्व में आती है जिसमें पुराने दो खो जाते हैं- पूरी तरह मिट जाते हैं। अहंकार भयभीत है। तुम वहां बचे ही नहीं। अगर बिना काम के तुम उस क्षण को, जहां तुम नहीं हो- पा सकते हो, तन काम की कोई जरूरत नहीं।
और तीसराः पहली बार काम में तुम प्राकृतिक हो पाते हो। नकली खो जाता है, मुखौटा उतर जाता है, समाज, संस्कृति, सभ्यता सब खो जाते हैं। तुम प्रकृति के अंश हो- जैसे पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, चांद-तारे हैं। तुम प्रकृति के ही एक अंश हो। तुम किसी महान विश्व व्यवस्था में हो, ताओ में हो। तुम इसमें बह रहे हो।

तुम इसमें तैर भी नहीं सकते, तुम हो ही नहीं। तुम बस बह रहे हो, धारा तुम्हें बहाए लिए जाती है।
यही तीन तत्त्व तुम्हें परम सुख देते हैं। काम तो केवल एक परिस्थिति है जिसमें यह सहज-स्वाभाविक रूप से घटित होता है। एक बार जब तुम इसे जान लेते हो, एक बार जब तुम इन तत्त्वों का अनुभव कर लेते हो, तुम बिना काम के स्वतंत्र रूप से इन्हें निर्मित कर सकते हो। सभी ध्यान निश्चित रूप से बिना काम के काम का अनुभव है। लेकिन तुम्हें इससे गुजरना होगा। यह तुम्हारा अनुभव होना चाहिए न कि सिद्धांत, न कि विचार।
तंत्र काम के पक्ष में नहीं, तंत्र इसके अतिक्रमण के पक्ष में है। लेकिन तुम केवल अनुभव से इसका अतिक्रमण कर सकते हो- अनिवार्य रूप से अनुभव के द्वारा- सिद्धांतों के द्वार नहीं। केवल तंत्र के माध्यम से ही ब्रह्मचर्य उपलब्ध होता है। यह विरोधाभासी प्रतीत होता है, लेकिन ऐसा नहीं है। केवल बोध से अतिक्रमण किया जा सकता है। अज्ञान अतिक्रमण करने में सहायक नहीं हो सकता, केवल पाखंडी होने में सहायता कर सकता है।
अब प्रश्न। किसी ने पूछा हैः
यह प्रश्न इसलिए उठता है क्योंकि हम इसे समझने में गलती करते चले जाते हैं। तुम्हारे संभोग (कामकृत्य) और तांत्रिक संभोग (कामकृत्य) में बुनियादी भिन्नता है। तुम्हारा संभोग छुटकारा पाने के लिए है। यह वैसे ही है जैसे छींक मारना- एक अच्छी छींक। ऊर्जा को बाहर निकाल फेंकना है, भारमुक्त होना है। यह विनाशात्मक है, सृजनात्मक नहीं। यह एक अच्छी चिकित्सा है, तुम्हें तनाव-मुक्त करती है, लेकिन इससे अधिक और कुछ नहीं।
तांत्रिक संभोग बुनियादी रूप से विपरीत है और भिन्न है। यह छुटकारा पाना नहीं है, यह ऊर्जा को बाहर फेंकना नहीं है। यह संभोग में बिना वीर्य-स्खलन के उसमें टिके रहना है- संभोग के आरंभिक क्षणों में ही रुके रहना है, अंत तक पहुंचने का उतावलापन नहीं। इससे मुल संभोग का गुण ही बदल जाता है।
दो बातें समझने जैसी है। दो प्रकार के चरम बिंदु हैं, दो प्रकार के ऑरगॉज्म, काम-संवेग हैं। एक प्रकार के ऑरगॉज्म का पता है तुक उत्तेजना के एक शिखर पर पहुंच जाते हो, फिर उसके आगे नहीं जा सकते, अंतिम छोर आ गया है। उत्तेजना उस चरम बिंदु तक पहुंच जाती है जहां वह अपनी इच्छा के अधीन नहीं रह जाती। ऊर्जा तुम्हारे भीतर उछाल लेती है और बाहर निकल जाती है। तुम उससे मुक्त हो जाते हो, एक बोझ-सा उतर जाता है। बोझ फेंक दिया जाता है, अब तुम शिथिल हो सकते हो और सो सकते हो।

तुम उसका उपयोग नींद की दवा के रूप में कर रहे हो। अच्छी नींद आ जाएगी- अगर तुम्हारा चित्त धर्म के बोझ से मुक्त है- तभी। नहीं तो नींद की दवा भी प्रभावहीन हो जाएगी, व्यर्थ हो जाएगी। अगर तुम्हारा चित्त धर्म के बोझ से दबा नहीं जा रहा बस, तभी संभोग नींद की दवा सिद्ध हो सकता है। अगर तुम्हारे मन में अपराध का भाव है, तुम्हारी नींद में बाधा पड़ जाएगी। तुम एक दबाव का अनुभव करोगे, तुम आत्म निंदा करने लगोगे, और तुम प्रतिज्ञा करोगे कि अब और नहीं... । तुम्हारी नींद एक दुखस्वप्न बन जाएगी। अगर तुम सहज स्वाभाविक व्यक्ति हो, धर्म और नैतिकता के बोझ से दबे नहीं जा रहे, बस, तभी संभोग का दवा के रूप में उपयोग किया जा सकता है।
यह एक प्रकार का ऑरगॉज्म है- उत्तेजना के परम चरम शिखर पर पहुंचना। तंत्र दूसरे प्रकार के ऑरगॉज्म पर केंद्रित है। अगर एक को हम शिखर कहते हैं, उसे तुम घाटी कह सकते हो। उत्तेजना के शिखर पर पहुंचना नहीं है, लेकिन शिथिलता की, रिलैक्सजेशन की गहरी घाटी में आना है। शुरू-शुरू में उत्तेजना को दोनों प्रकार के ऑरगॉज्म के लिए इस्तेमाल किया जाना जरूरी है, इसीलिए मेरा कहना है कि शुरू-शुरू में दोनों ही एक समान हैं, लेकिन अंत में दोनों सर्वथा भिन्न हैं।

उत्तेजना का दोनों के लिए उपयोग करना पड़ेगा। चाहे तुम उत्तेजना के शिखर
की ओर जा रहे हो या शिथिलता की घाटी में उतर रहे हो। पहले प्रकार के ऑरगॉज्म के लिए उत्तेजना तीव्र होनी चाहिए- ज्यादा से ज्यादा तीव्र। तुम्हें इसे शिखर की ओर पहुंचने में सहयोग देना पड़ेगा। दूसरे के लिए उत्तेजना सिर्फ आरंभ मे ही होती है। और जब आदमी एक बार इसमें प्रवेश कर जाता है, प्रेमी और प्रेमिका दोनों शिथिल हो सकते हैं। किसी तरह से भी हिलने-डुलने की जरूरत नहीं। वे प्रेमपूर्ण आलिंगन में बंधे विश्राम कर सकते हैं। जब स्त्री या पुरुष को ऐसा लगे कि काम-वासना शांत होने लगी है तो फिर थोड़ी हिल-जुल और उत्तेजना... लेकिन फिर शिथिल हो जाएं। तुम इस प्रगाढ़ आलिंगन को घंटों लंबा सकते हो। वीर्य-स्खलित नहीं होना चाहिए। और फिर दोनों एक गहरी नींद सो सकते हैं। यह घाटी का ऑरगॉज्म, काम-संवेग है। दोनों में कोई तनाव नहीं और वे दोनों शांत और तनाव रहित प्राणियों की भांति मिलते हैं।
साधारण संभोग में तुम दो उत्तेजित प्राणियों की भांति मिलते हो जो तनाव
से भरे हैं, उत्तेजित है, स्वयं को भार मुक्त करने में प्रयत्न शील हैं। साधारण संभोग पागलपन लगता है। तांत्रिक संभोग एक गहरा तनावशून्य ध्यान है। तब कोई प्रश्न नहीं उठता... कोई कितनी बार संभोग करे? जितनी बार तुम्हें अच्छा लगे, क्योंकि इसमें कोई शक्ति नष्ट नहीं होती, बल्कि शक्ति प्राप्त होती है।
तुम्हें इस बात का ख्याल भी नहीं होगा, लेकिन यह एक जैविक, जीव-ऊर्जा का
एक तथ्य है कि स्त्री और पुरुष दो विपरीत शक्तियां हैं- धन और ऋण; यिन और यैंग, या जो कुछ भी तुम उन्हें नाम दो। वे दोनों एक दूसरे के लिए चुनौती हैं और जब वे दोनों गहन शिथिलता में मिलते हैं तो एक दूसरे को पुनः जीवन-शक्ति प्रदान करते हैं। वे दोनों एक दूसरे में जीवन संचार करते हैं, वे दोनों और युवा हो जाते हैं, वे दोनों और अधिक सजीवता अनुभव करते हैं, वे दोनों नव-शक्ति से कांतिमय हो जाते हैं। और नष्ट कुछ भी नहीं होता। दो विपरीत ध्रुवों के मिलन से नव शक्ति का संचार होने लगता है।
तांत्रिक संभोग उतना किया जा सकता है जितना तुम करना चाहते हो। साधारण संभोग उतना नहीं किया जा सकता जितना तुम करना चाहते हो, क्योंकि उसमें तुम्हारी ऊर्जा नष्ट हो रही है और तुम्हारे शरीर को उसे पुनः प्राप्त करने के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है। और जब फिर प्राप्त होगी तभी तुम उसे फिर गंवा सकते हो। यह बात अजीब-सी लगती है सारा जीवन इसे खर्च करने और फिर प्राप्त करने में ही व्यतीत हो जाता है। यह केवल ग्रस्तता, आब्सेशन है।
दूसरी बात जो स्मरण रखने योग्य है। तुमने इस बात पर गौर किया होगा या नहीं, अगर तुम पशु-पक्षियों को देखो। तुम उन्हें मैथुन का आनंद लेते कभी न पाओगे। बंदरों, कुत्तों या किसी भी पशु को देखो- तुम ऐसा कभी नहीं देखोगे कि वे काम-कृत्य करते हुए हर्षित हो रहे हैं, आनंदित हो रहे हैं। उनके लिए यह एक यांत्रिक कृत्य है, कोई प्राकृतिक शक्ति उन्हें इस कर्म में धकेल रही है। यदि तुमने बंदरों को मैथुन करते हुए देखा होगा तो पाया होगा कि मैथुन के बाद वे अलग हो जाते हैं। उनके चेहरे देखो। वहां कोई आनंद की झलक नहीं- जैसे कुछ हुआ ही नहीं। जब ऊर्जा विवश करती है, जब ऊर्जा अतिशय हो जाती है, वे बाहर फेंक देते हैं।
साधारण संभोग ठीक इसी भांति है, और नीतिवादी बिल्कुल इसके विपरीत बात करते हैं। वे कहते हैं, "भोग मत करो। आनंदित मत होओ।" वे कहते हैं, "यह पशुओं जैसा है।" ऐसानहीं है। पशु कभी इसका आनंद नहीं उठा सकते- केवल मनुष्य ही इसका मजा ले सकता है। और जितनी गहराई से आनंद उठा सकते हो, उतनी ही तुममें मानवता का जन्म होता है। और अगर कहीं संभोग-कृत्य ध्यान बन जाए तो तुम उच्चतम शिखर को छूने में समर्थ हो जाते हो।
लेकिन याद रखो, तंत्र, घाटी का कामोत्ताप, वैली ऑरगॉज्म है। यह शिखर का अनुभव नहीं है, यह घाटी का अनुभव है।

पश्चिम में अब्राहम मस्लो ने इस शब्द पीक एक्स्पीरियंस, शिखर-अनुभव, को बहुत प्रचलित कर दिया। तुम उत्तेजना में शिखर की ओर बढ़ते हो और फिर धड़ाम से नीचे गिर जाते हो, और फिर हाथ आती है खिन्नता। तुम ऊंचे शिखर से गिर पड़ते हो। तंत्र-संभोग तुम ऐसा कभी अनुभव नहीं करते। तुम नीचे नहीं गिर रहे। तुम और इसके आगे नीचे नहीं गिर सकते- तुम घाटी में ही थे। बल्कि तुम ऊपर उठ रहे हो। जब तुम तांत्रिक संभोग के बाद वापस लौटते हो, तुम नीचे नहीं गिरते, तुम ऊपर उठ जाते हो। तुम्हें ऐसा लगता है जैसे तुम ऊर्जा से भर गए हो तुम और सजीव, ओजस्वी, कांतिमय हो गए हो। और वह हर्षेन्मान, वह आनंद कई घंटों तक, यहां तक कि कई दिनों तक बना रहेगा। यह सब इस बात पर आश्रित है कि तुम इस कृत्य में कितना गहरे जा पाए थे।
और अगर तुम देर-अबेर इसमें गति कर सको तो तुम जान सकोगे कि वीर्य-स्खलन
से ऊर्जा नष्ट होती है। इसकी आवश्यकता ही नहीं है- जब तक तुम्हें बच्चों की आवश्यकता नहीं है। और सारा दिन तुम एक गहन शिथिलता, एक गहन विश्रांति महसूस करोगे। एक तंत्र-संभोग का अनुभव, और कई दिनों तक तुम्हें एक ऐसे सुख का अनुभव होगा जैसे तुम घर पहुंच गए हो, तुम्हें अहिंसा, अविरोध, अखिन्नता की मीठी प्रतीति होगी। ऐसा व्यक्ति दूसरों के लिए कभी कोई खतरा नहीं बन सकता। अगर संभव होगा तो वह दूसरों को प्रसन्न रखने में सहायक होगा। अगर वह ऐसा नहीं कर सकेगा तो कम से कम किसी को दुख न देगा।
केवल तंत्र ही नये मनुष्य का निर्माण कर सकता है। एक ऐसा मनुष्य जिसने समय-शून्यता, निरहंकारिता का जान लिया है और अब अस्तित्त्व के साथ गहरा अद्वैत विकसित होगा। एक दूसरा आयाम खुल गया है। अब वह घड़ी दूर नही जब काम-वासना तिरोहित हो जाएगी। जब काम वासना अनजाने ही विलीन हो जाती है, तब अचानक एक दिन तुम्हें ज्ञात होता है कि काम-वासना तिरोहित हो गई है और तब ब्रह्मचर्य का जन्म होता है। लेकिन गलत शिक्षा के कारण कठिन और दुःसाध्य लगती है। और तुम भयभीत भी हो अपने मन के संस्कारों के कारण।
हम दो चीजों से बहुत भयभीत हैं- काम और मृत्यु। लेकिन ये दोनों ही बुनियादी हैं, और एक वास्तविक अर्थों में सत्यान्वेष इन दोनों में प्रवेश करेगा। वह काम-वृत्ति को समझने के लिए इसमें प्रवृत्त होगा क्योंकि काम-वृत्ति को समझना जीवन को समझना है। और वह यह भी जानना चाहेगा कि मृत्यु क्या है? क्योंकि जब तक तुम यह न जानोगे कि मृत्यु क्या है? तुम शाश्वत जीवन को नहीं जान सकते। अगर मैं काम के मूल केंद्र
में प्रवेश कर सकूं तो मैं जान सकता हूं कि जिंदगी क्या है? और अगर मैं स्वेच्छा से मृत्यु में, इसके मूल केंद्र में प्रवेश कर सकूं, जिस क्षण मृत्यु के केंद्र को स्पर्श करूंगा मैं शाश्वत हो जाऊंगा। अब मैं अमर हो जाऊंगा क्योंकि मृत्यु तो केवल उपर-ऊपर सतह पर घटित होती है।
सत्यान्वेष के लिए काम और मृत्यु दोनों बुनियादी हैं, लेकिन साधारण मनुष्यता के लिए ये दोनों वर्जनाएं हैं- उनकी चर्चा ही मत करो। और दोनों बुनियादी हैं और दोनों एक-दूसरे से जुड़ी हैं। उनका परस्पर संबंध इतना घनिष्ठ है कि काम मे प्रवेश करते समय तुम एक प्रकार की मृत्यु में ही प्रविष्ट होते हो, क्योंकि तुम मर रहे हो। अहंकार मिट रहा है, समय विलीन हो रहा है, तुम मर रहे हो। काम भी एक सूक्ष्म मृत्यु है। अगर तुम यह जान सको कि काम एक सूक्ष्म मृत्यु है, तो मृत्यु एक महान काम-संभोग, बन जाएगा।
कोई सुकरात मृत्यु में प्रवेश करते समय भयभीत नहीं होता। उलटे वह मौत को जानने के लिए अत्यधिक उत्साहित है, रोमांचित है, उतावला है। उसके हृदय मौत के लिए स्वागत का एक गहरा भाव है। क्यों? क्योंकि अगर तुम ने काम में घटित होने वाली छोटी मृत्यु को जान लिया है और इसके पीछे-पीछे आने वाले आनंद को जान लिया है, तुम उस महान मृत्यु को जानना चाहोगे- उसके पीछे एक महा-आनंद छिपा है। लेकिन हमारे लिए तो ये दोनों ही वर्जनाएं हैं। तंत्र के लिए ये दोनों ही खोज के मूलभूत आयाम है। इसमें से गुजरना अनिवार्य है।
किसी ने पूछा हैः-

"अगर कोई व्यक्ति ध्यान में अपनी रीढ़ में ऊर्ध्वगमन करती कुंललिनी शक्ति को अनुभव करता है, तो क्या उसके लिए काम-संवेग (ऑरगॉज्म) को उपलब्ध होने के लिए ध्यान शक्तियों काव्यय न होगा?
ये सभी प्रश्न वास्तव में बिना तंत्र-संभोग को जानने के कारण उठते हैं। साधारणतया तो यह ऐसा ही है। अगर तुम्हारी शक्ति ऊर्ध्व गमन करती है, तुम्हारी कुंडलिनी शक्ति को जगाती और मस्तिष्क की ओर गति करती है, तो तुम्हें साधारण ऑरगॉज्म, काम-संवेग नहीं हो सकता। और अगर कोशिश करोगे, तो तुम्हारे भीतर एक गहन संघर्ष पैदा हो जाएगा; क्योंकि ऊर्जा ऊर्ध्वगमन कर रही और तुम बलपूर्वक उसे नीचे की ओर ले जाने की कोशिश कर रहे हो। लेकिन तंत्र-संभोग कठिन नहीं है, वह बाधा नहीं बनेगा। वह सदुपयोगी होगा।
ऊर्ध्वगमन करती हुई ऊर्जा तंत्र-संभोग के विपरीत नहीं। तुम शिथिल और शांत बने रहते हो और अपने प्रेमी के सहवास में वह शिथिलता ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन में सहायक सिद्ध होगी। साधारण संभोग में यह मुश्किल होगा। इसी कारण वे सभी विधियां जो तांत्रिक नहीं है काम-वासना के विरुद्ध हैं, क्योंकि उन्हें यह ज्ञात नहीं कि एक घाटी-काम-संवेग भी संभव है। उन्हें एक ही प्रकार के संभोग का पता है- साधारण संभोग, साधारण कामोत्तेजना का पता है- और तब वह उनके लिए एक समस्या बन जाता है। योग के लिए वह एक समस्या है, क्योंकि योग तुम्हारी ऊर्जा को जबर-दस्ती ऊपर की ओर ले जाने की कोशिश करता है। उसे कुंडलिनी शक्ति कहते हैं- ऊर्ध्व-गमन करती हुई तुम्हारी काम-ऊर्जा।
संभोग में वह नीचे की ओर गमन करती है। योग कहेगा, "ब्रह्मचारी बनो, क्योंकि अगर तुम दोनों एक साथ कर रहे हो तुम अपनी शरीर-व्यवस्था में सब गड़बड़ कर रहे हो। एक तरफ तो तुम ऊर्जा को ऊपर उठा रहे हो और दूसरी तरफ तुम नीचे खींच रहे हो, सब गड़बड़ हो जाएगा। इसीलिए योग विधियां काम-विरोधी हैं।"
लेकिन तंत्र काम-विरोधी नहीं है, क्योंकि तंत्र में एक भिन्न प्रकार का काम-संवेग है, घाटी-काम-संवेग, जो तुम्हारा सहयोगी हो सकता है। कोई अव्यवस्था नहीं, कोई संघर्ष नहीं। उलटे वह तुम्हारी मदद करेगा। अगर तुम पलायन कर रहे हो- अगर तुम पुरुष हो और स्त्री से भाग रहे हो, या अगर तुम स्त्री हो और पुरुष से बच रही हो- तुम कुछ भी करो मन में दूसरा तो बना ही रहता है और तुम्हें नीचे की ओर खींचने में लगा रहता है। यह विरोधभासी लगता है, पर सत्य है।
अपने प्रेमी के प्रगाढ़ आलिंगन में बद्ध तुम यह भूल सकते हो कि दूसरा है। वास्तव में तुम केवल तभी दूसरे को भुला पाते हो। पुरुष भूल जाता है कि कोई स्त्री है, और स्त्री भूल जाती है कि कोई पुरुष है। केवल प्रगाढ़ आलिंगन में ही दूसरा नहीं बचता और जब दूसरा नहीं बचा, तम्हारी ऊर्जा सरलता से प्रवाहित हो सकती है, नहीं तो दूसरा उसे नीचे की ओर खींचता रहता है।
इसलिए योग और साधारण विधियां दूसरे से पलायन हैं, विपरीत यौन से पलायन है। उन्हें बचना ही पड़ेगा, सावधान रहना पड़ेगा, निरंतर संघर्ष और दमन करना पड़ेगा। लेकिन अगर तुम काम-विरोधी हो, तो यह विरोध ही तुम्हारे लिए निरंतर तनाव बना रहता है और निरंतर तुम्हें नीचे की ओर खींचता रहता है।
तंत्र कहता है, "किसी तनाव की जरूरत नहीं। दूसरे के साथ तनाव शून्य विश्राम में रहो। उस शिथिलता के क्षण में दूसरा विलीन हो जाता है और तुम्हारी ऊर्जा ऊपर की ओर बह सकती है। लेकिन वह तभी ऊर्ध्वगमन करती है जब तुम घाटी में हो। वह तभी नीचे की ओर बहती है जब तुम शिखर पर होते हो।"
एक प्रश्न औरः-
"गत रात्रि आपने कहा कि संभोग धैर्य पूर्वक धीरे-धीरे करना चाहिए, लेकिन साथ ही यह भी कहा कि काम-भोग को किसी प्रकार के नियंत्रण में रखने की जरूरत नहीं और इसमें समग्रस्ता अपेक्षित है।" मैं दुविधा में पड़ गया हूं।
यह नियंत्रण नहीं है। नियंत्रण बिल्कुल अलग बात है और शिथिलता, रिलैक्सजेशन बिल्कुल अलग। तुम इसमें शिथिल होते हो, इसमें स्वयं को ढीला छोड़ देते हो, नियंत्रित नहीं करते। अगर तुम इस को नियंत्रण में कर हरे हो तो यह

स्वयं को शिथिल छोड़ना न होगा। अगर तुम इसको नियंत्रित करने की चेष्टा कर रहे हो, तो देर-अबेर तुम इसे खत्म करने की जल्दी करोगे, क्योंकि नियंत्रण दबाव है। और हर दबाव तनाव पैदा करता है, और तनाव छुटकारा पाने की जरूरत पैदा करता है। वह नियंत्रण नहीं है! तुम बाधा नहीं डाल रहे। तुम सिर्फ जल्दी में नहीं हो, क्योंकि काम, सेक्स कहीं और जाना नहीं है, तुम कहीं और नहीं जा रहे। वह केवल क्रीडा है, कोई मंजिल नहीं, कहीं पहुंचना नहीं है, फिर जल्दी क्या है? लेकिन आदमी हमेशा, अपने प्रत्येक कृत्य में, पूरी तरह उपस्थित होता है। अगर तुम अपने हर काम में जल्दी करते हो, तुम संभोग में भी जल्दी करोगे- क्योंकि वहां भी तुम ही होओगे। जो व्यक्ति समय का बहुत ख्याल रखता है वह संभोग में भी जल्दी करेगा, जैसे कि समय बर्बाद हो रहा है। जैसे हमें (तात्क्षणिक) इनस्टांट काफी चाहिए वैसे ही इनस्टांट सेक्स चाहिए। काफी के मामले में तो ठीक है, लेकिन संभोग के साथ यह बात बिल्कुल मूढ़तापूर्ण है। इनस्टांट सेक्स, तात्क्षणिक काम नहीं हो सकता। यह कोई कर्म नहीं है और न ही यह कुछ ऐसी बात है जिसमें आप जल्दी कर सकते हैं। जल्दी तुम उसे नष्ट कर दोगे, तुम असली बात से चूक जाओगे। इसका आनंद लो क्योंकि उसके माध्यम से समय-शून्यता की अनुभूति होती है। अगर तुम जल्दी में हो, तुम्हें समय-शून्यता की अनुभूति संभव नहीं।
जब तंत्र कहता है, "धीरे-धीरे करते हुए उसका उसी तरह आनंद उठाओ जैसे कि तुम प्रातः भ्रमण कर रहे हो" ऐसे नहीं जैसे कि तुम दफतर जा रहे हो, वह बिल्कुल दूसरी बात है। जब तुम दफतर जा रहे हो, तुम कहीं पहुंचने के लिए उतावले हो। और जब तुम प्रातः भ्रमण के लिए निकलते हो, तुम्हें कोई जल्दी नहीं; क्योंकि तुम्हें कहीं पहुंचना नहीं है। तुम सिर्फ जा रहे हो। कोई जल्दी नहीं, कोई उतावलापन नहीं, कोई मंजिल नहीं। तुम कहीं से भी लौट सकते हो।
यह जल्दी का न होना ही घाटी बनाता है, नहीं तो शिखर निर्मित हो जाएगा। और
जब ऐसा कहा जाता, इसका अर्थ यह नहीं कि तुम्हें इस पर नियंत्रण रखना है। तुम्हें अपनी उत्तेजना पर नियंत्रण नहीं रखना है कयोंकि वे परस्पर विरोधी है। तुम उत्तेजना को नियंत्रित नहीं कर सके। अगर तुम उस पर अकुंश लगाते हो, तुम दुगुणी उत्तेजना उत्पन्न कर रहे हो। बस, सब ढीला छोड़ दो, इसे खेल की भांति लो- किसी मंजिल, किसी अंत की मत सोचो। आरंभ ही पर्याप्त है।
संभोग करते समय अपनी आंखें बंद कर लो, दूसरे के शरीर को महसूस करो, दूसरे
की ऊर्जा को अपनी ओर बहते हुए महसूस करो और उसमें डूब जाओ, पिघलो, द्रवित हो जाओ। आरंभ में ऐसा करना कठिन-सा लगेगा, पुरानी आदत है, इतनी जल्दी नहीं छूटेगी। हो सकता है कुछ दिन पीछा न छोड़े मजबूर करे... चली जाएगी। लेकिन उसको विदा करने में शक्ति मत गवाओ। बस, शिथिल, शिथिल और शिथिल होते जाओ। और अगर वीर्य-स्खलित न हो, तो ऐसा मत सोचना कि कुछ गलत हो रहा है, क्योंकि पुरुष सोचने लगता है कि कुछ गलत हो गया है। कुछ भी गलत नहीं हुआ है। और ऐसा भी मत सोचो कि तुम कुछ चूक गए हो। तुमने कुछ भी नहीं खोया है।
शुरू-शुरू में कुछ कमी सी महसूस होगी, क्योंकि उत्तेजना और शिखर वहां न होंगे। और इससे पहले कि घाटी आए तुम्हें ऐसा प्रतीत होगा जैसे कि कुछ कमी है, तुम कुछ खो रहे हो, लेकिन यह सिर्फ पुरानी आदत है। कुछ समय के भीतर, एक महीना या कुछ सप्ताह के भीतर घाटी प्रकट होने लगेगी। और जब घाटी दिखाई देने लगेगी, तुम अपने शिखरों को भूल जाओगे। तब कोई शिखर मूल्यवान न रहेगा। लेकिन तुम्हें प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। और उसके साथ जबदरस्ती मत करना- और उस पर काबू पाने की कोशिश मत करना। बस, शिथिल पड़े रहो।
शिथिलता, रिलैक्सेशन एक समस्या है- क्योंकि जब हम कहते हैं शिथिल हो जाओ, बुद्धि इसका यही अर्थ करती है कि कुछ प्रयत्न करना होगा। ऐसा हमारी भाषा के कारण प्रतीत होता है। मैं एक किताब पढ़ता था; उसका शीर्षक है "यू मस्ट रिलैक्स" तुम्हें शिथिल होना ही चाहिए, यह चाहिए ही तुम्हें रिलैक्स नहीं होने देगा, क्योंकि तब यह लक्ष्य बन जाता है, तुम्हें होना चाहिए, और अगर तुम नहीं हो सके, तुम कुंठित होओ, दुखी होओगे। चाहिए, इससे तुम्हें ऐसा लगता है

जैसे तुम्हें भरपूर प्रयत्न करना चाहिए, यात्रा बड़ी कठिन है। अगर तुम चाहिए की भाषा में सोच रहे हो, तुम शिथिल नहीं हो सकते।
भाषा एक समस्या है। कुछ चीजों को भाषा हमेशा गलत ढंग से व्यक्त करती है। उदाहरण के लिए- शिथिलता, रिलैक्सेशन। अगर मैं शिथिल होने के लिए कहता हूं तो यह भी एक कोशिश बन जाती है और तुम पूछते हो, "कैसे शिथिल हों?" कैसे पूछते ही तुम असली बात से चूक जाते हो। तुम यह नहीं पूछ सकते कि कैसे। तुम विधि पूछ रहे हो। विधि चेष्टा को जन्म देगी, चेष्टा तनाव पैदा करेगी। इसलिए अगर तुम मुझसे पूछते हो कि शिथिल कैसे हों, मैं कहूंगाः कुछ भी मत करो। बस, सब ढीला छोड़ दो। बस, लेट जाओ और प्रतीक्षा करो। कुछ भी मत करो। तुम जो भी करोगे वह सब अवरोधपूर्वक होगा, वह बाधा उत्पन्न करेगा।
अगर तुम एक से सौ तक और फिर वापस सौ से एक तक गिनती शुरू करते हो, तुम सारी रात सो न पाओगे। और अगर कभी गिनती के कारण नींद लग जाए, तो यह गिनती के कारण नहीं है- यह इसलिए हुआ, क्योंकि तुम गिनते-गिनते ऊब गए। यह गिनती के कारण नहीं है, यह ऊब के कारण है। तब तुम गिनना भूल गए और नींद आ गई। लेकिन नींद तभी आती है, रिलैक्सेशन तभी आती है, जब तुम कुछ नहीं करते। यही समस्या है।
जब मैं कहता हूं "काम-कृत्य" तो ऐसा लगता है कि यह प्रयत्न है। ऐसा नहीं हैं। सिर्फ अपनी प्रेमिका के साथ खेलना शुरू करो। बस खेलते जाओ, एक दूसरे को महसूस करो, एक दूसरे के प्रति संवेदनशील बनो। बस छोटे बच्चों की भांति खेलो या जैसे पशु-पक्षी खेलते हैं, जैसे कुत्ते आपस में खेलते हैं। बस सिर्फ खेलते ही जाओ। काम-कृत्य के बारे में बिल्कुल मत सोचो। वह घटे या न घटे।
अगर क्रीडा करते-करते वह घट जाए तो वह तुम्हें सरलता से घाटी की ओर ले जाएगा। अगर तुम इसके बारे में सोचने लगे, तब तुम पहले ही अपने से आगे निकल गए। तुम अपनी प्रेमिका के साथ क्रीडा कर रहे हो लेकिन तुम काम-कृत्य के बारे में सोच रहे हो। तब क्रीडा झूठी है। तुम वहां हो नहीं, तुम्हारा मन कहीं भविष्य में है।
जब तुम संभोग करते हो, मन कहीं सोच रहा होता है कि कैसे इसे खत्म करे। यह हमेशा तुम से आगे निकल जाना चाहता है। इसे ऐसा मत करने दो। केवल क्रीडा-रत रहो, भूल जाओ काम-कृत्य को। वह तो घटित होगा ही। इसे घटित होने दो। तब शिथिल होना आसान हो जाएगा। और जब यह घटता है... केवल शिथिल हो जाओ। एक दूसरे के साथ रहो। एक दूसरे की उपस्थिति में प्रसन्नता अनुभव करो।
कुछ नकारात्मक में किया जा सकता है। उदाहरण के लिए- जब तुम उत्तेजित होने लगते हो, तुम्हारी सांस तेजी से चलने लगती है, क्योंकि उत्तेजना के लिए तेज सांस की आवश्यकता है। शिथिलता के लिए अच्छा है कि तुम धीमी गति से गहरी सांस लो, सांस सहजतापूर्वक और सरलतापूर्वक लो। तब काम-कृत्य के समय को बढ़ाया जा सकता है।
कुछ भी मत कहो, कुछ भी बात मत करो, क्योंकि इससे बाधा पड़ती है। बुद्धि का उपयोग मत करो, शरीरों का उपयोग करो। केवल यह महसूस करने के लिए कि क्या घट रहा, अपने मन का उपयोग करो। जो ऊष्मा प्रवाहित हो रही है, जो प्रेम प्रवाहित हो रहा है, जिस ऊर्जा से मिलन हो रहा है, सिर्फ उसे महसूस करो। इसके प्रति सचेत रहो। और इसे तनाव मत बना लेना इसके साथ बहना-अचेष्टित। तब केवल तब घाटी प्रकट होती है। और एक बार घाटी दिख जाए, तुम इसके पार हो गए।
एक बार उस घाटी को, शिथिल काम-संवेग रिलैक्स्ड ऑरगॉज्म को अनुभव कर लेना, उसे पहचान लेना ही अतिक्रमण है। वहां काम नहीं। अब वह एक ध्यान, एक सामधि बन गया है।

तंत्र, अध्यात्म और काम
छठवां प्रवचन

तंत्र- सपर्पण का मार्ग

पहला प्रश्नः भगवान, विज्ञान-भैरव-तंत्र की जिन विधियों की हमने अब तक चर्चा की है क्या वे वास्तव में तंत्र का केंद्रीय विषय होने की अपेक्षा योग के विज्ञान से संबंधित हैं? और तंत्र का केंद्रीय विषय क्या है? इसे समझाने की कृपा करें।
यह प्रश्न बहुतों के मन में उठता है। जिन विधियों की हमने चर्चा की है, उनका योग में भी प्रयोग होता है, लेकिन कुछ भिन्न ढंग से। तुम एक ही विधि का प्रयोग बिल्कुल भिन्न दर्शन की पृष्ठ भूमि में भी कर सकते हो। उसका ढांचा उसकी पृष्ठभूमि अलग होती है, विधि नहीं। योग का जीवन के प्रति भिन्न दृष्टिकोण है, तंत्र से बिल्कुल विपरीत।
योग संघर्ष में विश्वास करता है, योग मूलरूप से संकल्प का मार्ग है। तंत्र संघर्ष में विश्वास नहीं करता, तंत्र संकल्प का मार्ग नहीं है। इसके वपरीत तंत्र समग्र समर्पण का मार्ग है। तुम्हारे संकल्प की जरूरत नहीं। तंत्र के लिए तुम्हारी इच्छा शक्त्ति समस्या है, तुम्हारी सारी पीड़ा, सारे दुख का कारण है। योग के लिए तुम्हारा समर्पण, तुम्हारी संकल्पहीनता समस्या है।
क्योंकि तुम्हारी संकल्प शक्ति कमजोर है। इसी कारण तुम दुखी हो, पीड़ित हो। योग के लिए, तंत्र के लिए, क्योंकि तुम्हारे पास संकल्प है, तुम्हारा अहंकार है, तुम्हारी निजता है, इसी कारण तुम दुखी हो।
योग कहता है, "अपनी संकल्प-शक्ति को पूर्णता तक पहुंचाओ और तुम मुक्त हो जाओगे।"
और तंत्र कहता है, "अपनी इच्छा-शक्ति को पूरी तरह मिटा दो, बिल्कुल खाली
हो जाओ और वही तुम्हारी मुक्ति बनेगी।" और दोनों ही ठीक हैं... इसीलिए कठिनाई होती है। मेरे देखे दोनों ठीक हैं।
लेकिन योग का मार्ग बहुत कठिन है। लगभग असंभव ही है, कि तुम अपने अहं की पूर्णता को उपलब्ध हो जाओ। इसका अर्थ है कि तुम सारे जगत के केंद्र हो जाओ। रास्ता बहुत लंबा है, कठिन है। और वास्तव में, कभी मंजिल तक नहीं पहुंचता। तो योग के मानने वालों का क्या होता है? कहीं बीच रास्ते में, किसी जन्म में, वे तंत्र की ओर मुड़ जाते हैं। ऐसा होता है।
बुद्धि से बात समझ में आती है, अस्तित्त्व गत रूप से असंभव है। यदि यह संभव है, तो तुम योग के मार्ग से भी पहुंच जाओगे। लेकिन अक्सर ऐसा होता नहीं। अगर यह घटता है तो कभी-कभार घटित होता है। कोई एक महावीर... सदियों पे सदियां बीत जाती हैं और तब कोई महावीर योग के माध्यम से पहुंचता है। लेकिन यह अपवाद है और नियम को ही सिद्ध करता है।
लेकिन योग तंत्र की अपेक्षा अधिक आकर्षित करता है। तंत्र सरल है, सहज है,
और तुम बड़ी आसानी से, बिना किसी प्रयास के, प्राकृतिक रूप से उपलब्ध हो सकते हो। तंत्र तुम्हें कभी इतना आकर्षित नहीं करता। क्यों? जो भी तुम्हें आकर्षित करता है वह तुम्हारे अहंकार को अच्छा लगता है। जो भी तुम्हारे अहंकार को परितुष्ट करता है वही तुम्हें अधिक आकर्षित करता है।
यह सच है कि जितने तुम अहंकारी हो, उतना ही योग तुम्हें आकर्षित करेगा, क्योंकि यह शुद्धतम अहंकार पर आधारित प्रयास है। जितना असंभव उतना ही अहंकार के लिए आकर्षण। इसी कारण एवरेस्ट के लिए इतना आकर्षण है, हिमालय की चोटी पर पहुंचना बहुत ही मुश्किल है। और जब हिलेरी और तेनसिंह एवरेस्ट पर पहुंचे तो एक क्षण के लिए उन्हें अत्यंत हर्ष का अनुभव हुआ। वह क्या था?- अहंकार की तृप्ति। वे प्रथम व्यक्ति थे।

जब पहला आदमी चांद की धरती पर उतरा, तुम कल्पना कर सकते हो उसे कैसा लगा होगा? वह पूरे इतिहास में पहला आदमी था। अब कोई उसका स्थान नहीं ले सकता, वह आने वाले इतिहास में पहला आदमी होगा। अब उसके स्थान को, उसकी प्रतिष्ठा को बदला नहीं जा सकता। अहंकार बहुत गहरा हो गया है। अब कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं है और होगी भी नहीं। लेकिन कई और चंद्रमा की धरती पर उतरेंगे और कई एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ेंगे।
योग तुम्हें एक उच्चतर शिखर देता है, एक ऐसी मंजिल देता है जहां पहुंचा नहीं जा सकता- शुद्ध, परिपूर्ण, निरंकुश अहंकार देता है।
नीत्शे को योग बहुत पसंद आया होता क्योंकि उसका कहना था कि जीवन के पीछे
जो शक्ति काम कर रही है वह है- संकल्प शक्ति योग तुम्हें यह ख्याल देता है कि तुम इसके माध्यम से और अधिक शक्तिशाली हो जाओगे। जितना ज्यादा तुम अपने पर नियंत्रण रख सकते हो, जितना ज्यादा तुम अपनी वृत्तियों को नियंत्रित रख सकते हो, जितना ज्यादा अपने शरीर को अपने नियंत्रण में रख सकते हो, जितना ज्यादा अपने मन पर अंकुश लगा सकते हो... तुम स्वयं को उतना ही ज्यादा शक्तिशाली अनुभव करते हो। तुम भीतर अपने स्वामी हो जाते हो। लेकिन यह स्वामित्व संघर्ष के माध्यम से, हिंसा के माध्यम से प्राप्त होता है।
और कमोबेश सदा ऐसा ही होता है, कि जिस व्यक्ति ने कई जन्मों में योगाभ्यास किया हो वह एक ऐसे बिंदु पर पहुंच जाता है, जहां सारी यात्रा उबाऊ, नीरस और व्यर्थ हो जाती है। क्योंकि जितनी अहंकार की पूर्ति होती है उतनी ही व्यर्थता का अहसास होता है। और तब योग के मार्ग पर चलने वाला तंत्र की ओर मुड़ जाता है।
लेकिन योग इसी कारण आकर्षित करता है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अहंकारी है। तंत्र शुरू-शुरू में ठीक नहीं लगता। तंत्र उन्हें ठीक लगता है जो विशेष्ज्ञ हैं- जिन्होंने स्वयं पर कुछ काम किया है, जिन्होंने अनेक जन्मों में योग-साधना के द्वारा बहुत संधर्ष किया है, उन्हें अब तंत्र की बात उचित लगती है, क्योंकि अब वे समझ सकते हैं। साधारणतम तुम्हें तंत्र आकर्षित नहीं करेगा। अगर तुम्हें आकर्षित करता है भी तो गलत कारणों से आकर्षित करता है। अतः उन्हें भी ठीक तरह से समझ लेना चाहिए।
पहली बात तो यह है कि तंत्र तुम्हें आकर्षित नहीं करेगा, क्योंकि वह संघर्ष नहीं तुम्हारा समर्पण चाहता है। वह तुम्हें तैरने के लिए नहीं, बहने के लिए कहता है। वह तुम्हें धारा के विरुद्ध नहीं, धारा के साथ बहने को कहता है। तंत्र कहता है कि तुम्हारा जो भी स्वभाव है, प्रकृति है वह ठीक है। अपनी प्रकृति पर विश्वास रखो, उसके साथ लड़ो मत। काम वृत्ति भी शुभ है, उसका भरोसा करो, उसका अनुगमन करो, उसके साथ बहो- लड़ो मत। अ-संघर्ष तंत्र की मूल शिक्षा है। बहो।
यह बात तुम्हें जंचती नहीं। इससे तुम्हारे अहंकार को तृप्ति नहीं मिलती। तंत्र पहले कदम पर ही तुम्हारे अहंकार को मिटा देने की बात कहता है। प्रारंभ में ही इसे विदा कर देने की बात कहता है।
योग भी तुमसे यही चाहेगा, लेकिन अंत में। यह पहले तुम्हें अहंकार को पूरी तरह शुद्ध करने की बात कहेगा और जब अहंकार पूरी तरह शुद्ध हो जाएगा तो विलीन हो जाएगा। तब वह बच ही नहीं सकता। लेकिन योग में यह अंत है और तंत्र में प्रथम।
इसलिए साधारणतया तंत्र आकर्षित नहीं करता। और अगर करता है तो गलत कारणों से आकर्षित करता है। उदाहरण के लिए, अगर तुम काम वासना को भोगना चाहते हो, तो तुम तंत्र के द्वारा इसे तर्क संगत बना लोगे, इसका औचित्य सिद्ध कर दोगे। वही आकर्षण का कारण बन जाएगा। अगर तुम सुरा और सुंदरी को और अन्य चीजों को भोगना चाहते हो तो तंत्र ठीक लगेगा। लेकिन, वास्तव में, तुम तंत्र की ओर आकर्षित नहीं हो रहे- तंत्र एक युक्ति है, एक उपाय है- तुम किसी और चीज की ओर आकर्षित हो रहे हो। तुम्हें वह आकर्षित कर रहा है जो भोगने की अनुमति दे रहा है। इसलिए तंत्र गलत कारणों से आकर्षक लगता है।

तंत्र तुम्हारे भोग को सहारा देने के लिए नहीं है, उसे रूपांतरित करने
के लिए है। तंत्र से तुम स्वयं को आसानी से धोखा दे सकते हो। और धोखे की इस संभावना के कारण महावीर तंत्र की सलाह नहीं देते। यह संभावना बनी ही रहती है। आदमी इतना धोखेबाज और चालाक है कि वह उसके लिए तर्क दे सकता है।
उदाहरण के लिए- चीन में, पुराने चीन में तंत्र से मिलता जुलता एक गुह्य विज्ञान था जो ताओ के रूप में जाना जाता है। ताओ की प्रवृत्तियां भी तंत्र जैसी है। उदाहरण के लिए- ताओ कहता है कि यदि तुम कामवासना से मुक्त होना चाहते हो, यह अच्छी बात है। यह अच्छा है कि एक ही स्त्री या पुरुष से चिपके नहीं रहना चाहते। अगर तुम मुक्त होना चाहते हो तो एक के साथ ही मत चिपके रहो। इसलिए ताओ कहता है, "यह अच्छा है कि तुम साथी बदलते रहो।"
यह बिल्कुल ठीक है- लेकिन तुम इसे तर्क संगत सिद्ध कर सकते हो। तुम स्वयं
को धोखा दे सकते हो। अगर तुम्हें सिर्फ काम की, सेक्स की सनक हो तो तुम सोच सकते हो कि मैं तंत्र की साधना कर रहा हूं, इसलिए मैं एक ही स्त्री के साथ चिपका नहीं रह सकता, मुझे स्त्री बदलनी ही होगी। और चीन में बहुत-से राजाओ ने इसकी साधना की। इसके लिए उनके बड़े-बड़े रनिवास थे।
लेकिन ताओ अर्थपूर्ण है- ताओ तभी अर्थपूर्ण है, जब तुम मानव मन के विज्ञान को गहराई से देखो। अगर तुम एक ही स्त्री को गहराई से देखो। अगर तुम एक ही स्त्री को जानते हो, तो देर-अबेर उस स्त्री का आकर्षण खो जाएगा, लेकिन स्त्रियों में आकर्षण बना रहेगा। विपरीत लिंग, आपोजिट सेक्स तो तुम्हें आकर्षित करेगा, लेकिन यह तुम्हारी पत्नी ओपोजिट सेक्स की नहीं लगेगी। वह तुम्हें आकर्षित न कर पायेगी, वह तुम्हारे लिए चुंबक का काम न करेगी। तुम उसके आदि हो गए हो।
ताओ कहता है, "अगर पुरुष बहुत-सी स्त्रियों के बीच रहता है, वह स्त्री से पार हो जाता है। बहुत-सी स्त्रियों की जानकारी ही उसे उनके पार जाने में सहायता करेगी।" और यह ठीक है, लेकिन खतरनाक भी है। क्योंकि यह तुम्हें इसलिए अच्छा नहीं लगेगा कि यह ठीक है, बल्कि इसलिए कि यह तुम्हें लाइसेंस देता है।
यही तंत्र की समस्या है।
इसी कारण चीन में भी इसके ज्ञान को दबा दिया गया, उसे दबा ही देना पड़ा।
भारत में भी तंत्र को दबा दिया गया क्योंकि यह बहुत ही खतरनाक बातें कहता है।
वे खतरनाक हैं तुम्हारे कारण, क्योंकि तुम धोखे बाज हो। वैसे वे अद्भुत हैं।
मनुष्य के चित्र में तंत्र से बढ़कर अभी कुछ और घटित नहीं हुआ है। कोई भी ज्ञान इतना गहरा नहीं है।
लेकिन ज्ञान के हमेशा अपने कुछ खतरे हैं। उदाहरण के लिए अब विज्ञान एक खतरा बन गया है, क्योंकि इसने तुम्हारे सामने गूढ़ रहस्यों को खोलकर रख दिया है। अब तुम जानते हो कि किस तरह आणविक ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती। ऐसा कहा जाता है आइन्स्टीन ने कहा था कि अगर उसे पुनः जीवन मिले तो वह एक वैज्ञानिक होने की बजाय प्लंबर होना ज्यादा पसंद करेगा। क्योंकि जब वह अपने अतीत में झांककर देखता है तो उसे अपना जीवन व्यर्थ लगता है। केवल व्यर्थ ही नहीं बल्कि मानवता के लिए खतराक भी लगता है। और उसने एक गूढ़तम रहस्य ऐसे मनुष्य को दिया है जो स्वयं को भी धोखा देने में कुशल है।
मुझे लगता है कि वह दिन जल्दी आएगा जब हम विज्ञान के ज्ञान को भी दबा देंगे। ऐसी अफवाहें हैं कि वैज्ञानिक गुप्त रूप से विचार कर रहे हैं कि अब और रहस्यों को प्रकट किया जाए या नहीं। क्या हम अपनी खोज बंद कर दें या आगे बढ़ें?- क्योंकि अब खतरा बहुत बढ़ गया है।
केवल अज्ञान ही नहीं प्रत्येक ज्ञान भी खतरनाक है। तुम ज्ञान के साथ ज्यादा कुछ नहीं कर सकते। अंधविश्वास हमेशा अच्छे होते हैं। कभी खतरनाक सिद्ध नहीं होते, जैसे होम्योपैथी। दबा दो... वह तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचाएगी। वह तुम्हारे लिए सहायक होगी या नहीं तुम्हारे भ्रम पर, तुम्हारे अंध विश्वास पर आश्रित है। एक बात पक्की है, यह तुम्हें नुकसान नही पहुंचाएगी। होम्योपैथी हानिकारक नहीं है, वह बहुत गहरा अंधविश्वास है। यही

तुम्हारी मदद कर सकती है। स्मरण है, जब हम कहते हैं कि केवल यही चीज मेरी सहायता कर सकती, तब यह अंधविश्वास बन जाती है। और जब कोई चीज लाभ और हानि दोनों कर सके तो उसे ज्ञान समझना।
असली चीज दोनों बातें कर सकती है- लाभ भी और हानि भी। बस झूठी, नकली, काल्पनिक चीज ही केवल मदद कर सकती है। लेकिन तब यह मदद उस चीज से नहीं मिलती, वह हमेशा तुम्हारे मन का प्रेक्षपण होता है। इसलिए झूठी, भ्रामक और काल्पनिक चीजें ही एक दृष्टि से अच्छी होती हैं- वे कभी तुम्हें हानि नहीं पहुंचातीं। तंत्र विज्ञान है अणु-ज्ञान से भी अधिक गूढ़, क्योंकि अणु-विज्ञान का संबंध पदार्थ से ज्यादा है और तंत्र का संबंध तुम से है। और तुम किसी भी अणु- शक्ति से अधिक खतरनाक हो। तंत्र का संबंध- तुम से, जैविक अणु से, जीवंत कोशिका से, जीवन-चेतना की भीतरी व्यवस्था से है।
इसी कारण तंत्र की इतनी रुचि काम में, सेक्स में है। जिसकी रुचि जीवन और चैतन्य में होगी उसकी रुचि काम में स्वतः ही होगी; क्योंकि काम जीवन का, प्रेम का, जो जो चेतना के जगत में घट रहा है, उन सबका स्रोत है। इसलिए अगर कोई खोजी काम में रुचि नहीं रखता, वह सत्य का खोजी ही नहीं है। वह दार्शनिक हो सकता है लेकिन खोजी नहीं हो सकता। दर्शन कम और ज्यादा बकवास ही है- उनके बारे में सोचते रहना जो व्यर्थ हैं।
मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन किसी लड़की को चाहता था। लड़कियों के मामले में उसका भाग्य कुछ अच्छा न था। कोई लड़की उसे पसंद नहीं करती थी। और वह एक लड़की से पहली बार मिलने जा रहा था, अतः उसने अपने एक मित्र से पूछा, "औरतों के मामले में तुम कमाल के हो। इसका राज क्या है? तुम तो उन्हें सम्मोहित-सा कर लेते हो और मैं हमेशा नाकामयाब रहता हूं, मुझे कुछ सलाह दो। मैं पहली बार इस लड़की को मिलने जा रहा हूं। इसलिए मुझे कुछ राज की बातें बता दो।"
मित्र ने कहा, "तीन बातें याद रखना। हमेशा भोजन, उसके परिवार और फिलास्फी की बात करना।"
"भोजन के बारे में क्यों?" मुल्ला ने पूछा।
मित्र ने कहा, "मैं हमेशा भोजन की चर्चा करता हूं। लड़की को यह बात बहुत अच्छी लगती है, क्योंकि प्रत्येक औरत को भोजन में रुचि होती है। वह अपने बच्चे के लिए पोषण है, सारी मनुष्यता के लिए पोषण है। इसलिए मूलरूप से उसकी रुचि भोजन में है।"
मुल्ला ने कहा, "ठीक है। और परिवार क्यों?"
उस मित्र ने कहा, "उसके परिवार की बाबत पूछो ताकि तुम्हारा इरादा नेक दिखाई दे।"
तब मुल्ला ने पूछा, "और फिलास्फी के बारे में क्यों?
उसने कहा, "फिलास्फी की चर्चा करो- इससे औरत को लगता है कि वह बुद्धिमान है।"
मुल्ला उसी समय भागा। जैसे ही लड़की को देखा उसने पूछा, "सुनो, क्या तुम्हें नुडल्ज अच्छी लगती हैं?"
लड़की थोड़ा चौंकी और बोली, "नहीं।"
मुल्ला ने दूसरा सवाल पूछा, "क्या तुम्हारा कोई भाई है?"
लड़की और भी हैरान हुई। यह किस प्रकार की मुलाकत है! उसने कहा, "नहीं।" मुल्ला को एक क्षण के लिए कुछ सूझा नहीं कि दार्शनिक बात कैसे शुरू करे? केवल एक क्षण के लिए ही, पर फिर उसने पूछा, "अब अगर तुम्हारा कोई भाई होता, तो क्या उसे नूडल्ज पसंद आतीं?"
यह दर्शन है, तत्त्व ज्ञान है। दार्शनिक सिद्धांत निरर्थक हैं। तंत्र
की दर्शन में, तत्त्वज्ञान में कोई दिलचस्पी नहीं, तंत्र का रस वास्तविक अस्तित्त्वगत जीवन में है। तंत्र कभी नहीं पूछता कि कहां है परमात्मा? क्या स्वर्ग और नरक हैं? नहीं, तंत्र जीवन के बुनियादी प्रश्न पूछता है। इसी कारण तंत्र की काम और प्रेम में इतनी रुचि है- ये आधारभूत हैं। तुम इन्हीं के माध्यम से आए हो, तुम इनका ही अंश हो।

तुम काम-ऊर्जा का ही खेल हो, और कुछ नहीं हो। और जब तक तुम इस ऊर्जा को जानोगे नहीं, इसका अतिक्रमण नहीं कर लोगे तब तक तुम कुछ और नहीं हो सकते। तुम अभी, इस समय काम-ऊर्जा के सिवाय और कुछ नहीं हो। तुम इससे कुछ ज्यादा हो सकते हो। लेकिन अगर तुम इसे जानते नहीं, इसका अतिक्रमण नहीं करते, तो तुम इससे ज्यादा कभी नहीं हो सकते। बीज ही बने रहने की संभावना है।
इसलिए तंत्र का रस काम, प्रेम और नैसर्गिक जीवन में है। लेकिन उसे जानने
का मार्ग संघर्ष नहीं है। तंत्र कहता है, अगर तुम संघर्षशील प्रवृत्ति के व्यक्त्ति हो तो तुम कुछ भी नहीं जान सकते तब तुम ग्रहणशील नहीं होते। क्योंकि तब तुम जूझ रहे हो अतः रहस्य तुम पर प्रकट नहीं हो सकेंगे। तुम उन्हें ग्रहण करने के लिए खुले नहीं हो।
और जब तुम संघर्ष कर रहे हो जूझ रहे हो तो तुम सदा बाहर हो। अगर तुम कामवासना से लड़ रहे हो तो तुम बाहर हो। अगर तुम काम-वासना को समर्पित हो जाते हो, तो तुम उसके अंतरतम में प्रवेश कर जाते हो। अगर तुम समर्पण कर देते हो तो बहुत-सी बातें तुम्हें ज्ञात हो जाती हैं।
तुमने काम को भोगा है लेकिन उसके पीछे हमेशा संघर्ष की वृत्ति रही है। इसलिए उसके बहुत-से रहस्यों को तुम जान नहीं पाए। उदाहरण के लिए तुम्हें काम की, सैक्स की जीवन दायिनी शक्तियों का पता नहीं है। क्योंकि उनको जानने के लिए अंतर्मुखता चाहिए।
अगर तुम सच में काम-ऊर्जा के साथ बह रहे हो, उसके आगे समग्र-समर्पण है, तो देर-अबेर तुम उस बिंदु पर पहुंच जाओगे जब तुम्हें यह ज्ञात होगा कि काम केवल एक नये जीव को ही जन्म नहीं दे सकता, बल्कि और अधिक जीवन-शक्ति भी प्रदान कर सकता है।
प्रेमियों के लिए काम, सेक्स जीवन-शक्ति बन सकता है, लेकिन उसके लिए समर्पण चाहिए। और अगर एक बार समर्पण कर दिया, तो अनेक आयाम बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए, तंत्र ने यह जान लिया था, ताओ ने जान लिया था कि अगर संभोग में तुम्हारे वीर्य का स्खलन की कोई आवश्यकता भी नहीं है। तंत्र और ताओ कहते हैं वीर्य-स्खलन इसलिए होता है, क्योंकि तुम संघर्ष कर रहे हो। वैसे इसकी जरूरत नहीं है।
प्रेमी और प्रेमिका संभोग में बिना किसी तनाव के प्रगाढ़ आलिंगन में एक दूसरे से जुड़े हैं। स्खलन के लिए कोई उतावलापन नहीं, काम-क्रीड़ा को समाप्त कर देने की जल्दी नहीं। वे सिर्फ एक दूसरे में शिथिल, रिलैक्स हो सकते हैं। अगर वे पूरी तरह शिथिल हैं, तो अपने में ज्यादा जीवन-शक्ति अनुभव करेंगे। वे दोनों एक दूसरे के जीवन को और समृद्ध करेंगे।
ताओ कहता है, अगर व्यक्ति संभोग में उतावला न हो, केवल गहरे विश्राम में
ही शिथिल हो तो वह एक हजार वर्ष जी सकता है। अगर स्त्री और पुरुष एक दूसारे के साथ गहरे विश्राम में हो एक दूसरे में डूबे हों, कोई जल्दी न हो, कोई तनाव न हो, तो बहुत कुछ घट सकता है, रासायनिक चीजें घट सकती हैं। क्योंकि उस समय दोनों के जीवन-रसों का मिलन होता है, दोनों की शरीर-विद्युत, दोनों की जीवन-ऊर्जा का मिलन होता है। और केवल इस मिलन से- क्योंकि ये दोनों एक दूसरे से विपरीत हैं- एक पॉजिटिव है, एक नेगेटिव है। ये दो विपरीत धु्रव हैं- सिर्फ गहराई में मिलन से वे एक दूसरे को और जीवतंता प्रदान करते हैं।
वे बिना वृद्धावस्था को प्राप्त हुए लंबे समय तक जी सकते हैं। लेकिन यह तभी जाना जा सकता है जब तुम संघर्ष नहीं करते। यह बात विरोधाभासी प्रतीत होती है। जो कामवासना से लड़ रहे हैं उनका वीर्य स्खलन जल्दी हो जाएगा, क्योंकि तनाव ग्रस्त चित्त तनाव से मुक्त होने की जल्दी में होता है।
नई खोजों ने कई आश्चर्य चकित करने वाले तथ्यों को उद्घाटित किया है। मास्टर्स और जान्सन्स ने पहली बार इस पर वैज्ञानिक ढंग से काम किया है कि गहन मैथुन में क्या-क्या घटित होता है। उन्हें यह पता चला कि पचहत्तर प्रतिशत पुरुषों का समय से पहले ही वीर्य-स्खलन हो जाता है। पचहत्तर प्रतिशत पुरुषों का प्रगाढ़ मिलन से पहले ही स्खलन हो जाता है और काम-कृत्य समाप्त हो जाता है।

और नब्बे प्रतिशत स्त्रियां काम के आनंद-शिखर, ऑरगॉज्म तक पहुंचती ही नहीं, वे कभी शिखर तक गहन तृप्तिदायक शिखर तक नहीं पहुंचतीं, नब्बे प्रतिशत स्त्रियां।
इसी कारण स्त्रियां इतनी चिढ़चिढ़ी और क्रोधी होती हैं और वे ऐसी ही रहेंगी। कोई ध्यान आसानी से उनकी सहायता नहीं कर सकता, कोइ दर्शन, कोई धर्म, कोई नैतिकता उसे पुरुष- जिसके साथ वह रह रही है- के साथ चैन से जीने में सहायक नहीं हो सकता। और तब उनकी खीझ, उनका तनाव... क्योंकि आधुनिक विज्ञान तथा प्राचीन तंत्र दोनों ही कहते हैं कि जब तक स्त्री को गहन काम-तृप्ति नहीं मिलेगी, वह परिवार के लिए एक समस्या ही बनी रहेगी। वह हमेशा झगड़ने के लिए तैयार होगी।
इसलिए अगर तुम्हारी पत्नी हमेशा झगड़े के भाव में रहती है, तो सारी बातों
पर फिर से विचार करो। केवल पत्नी ही नहीं, तुम भी इसका कारण हो सकते हो। और क्योंकि स्त्रियां काम संवेग, ऑरगॉज्म, तक नहीं पहुंचती, वे काम-विरोधी हो जाती हैं। वे संभोग के लिए आसानी से तैयार नहीं होतीं। उनकी खुशामद करनी पड़ती है; वे काम-भोग के लिए तैयार ही नहीं होतीं। वे इसके लिए तैयार भी क्यों हो, उन्हें कभी इससे कोई सुख भी तो प्राप्त नहीं होता। उलटे, उन्हें तो ऐसा लगता है कि पुरुष उनका उपयोग करता है, उन्हें इस्तेमाल किया गया है। उन्हें ऐसा लगता है कि वस्तु की भांति उपयोग कर उन्हें फेंक दिया गया है।
पुरुष संतुष्ट है क्योंकि उसने वीर्य बाहर फेंक दिया है। और तब वह करवट लेता है और सो जाता है और पत्नी रोती है। उसका उपयोग किया गया है और यह प्रतीति उसे किसी भी रूप में तृप्ति नहीं देती। इससे उसका पति या प्रेमी तो छुटकारा पाकर हल्का हो गया, लेकिन उसके लिए यह कोई संतोषप्रद अनुभव न था। नब्बे प्रतिशत स्त्रियों को तो यह भी नहीं पता कि ऑरगॉज्म क्या होता है? क्योंकि वे शारीरिक संवेग के ऐसी आनंददायी शिखर पर कभी पहुंचती ही नहीं, जहां उनके शरीर का एक-एक तंतु सिहर उठे और एक-एक कोशिका सजीव हो जाए। वे वहां तक कभी पहुंच नहीं पातीं। और इसका कारण है समाज की काम-विरोधी चित्तवृत्ति। संघर्ष करनेवाला मन वहां उपस्थित है, इसलिए स्त्री इतनी दमित और मंद हो गई है।
और पुरुष इस कृत्य को ऐसे किए चला जाता है जैसे वह कोई पाप कर रहा हो। वह स्वयं को अपराधी अनुभव करता है, वह जानता है, "इसे करना नहीं चाहिए।" और जब वह अपनी पत्नी या प्रेमिका से संभोग करता है तो वह उस समय किसी महात्मा के बारे में ही सोच रहा होता है। "कैसे किसी महात्मा क पास जाऊं और किस तरह काम-वासना से, इस अपराध से, इस पाप से पार हो जाऊं।"
महात्माओं से पीछा छुड़ाना बड़ा मुश्किल है, वे हमेशा विद्यमान रहते हैं।
जब तुम प्रेम भी कर रहे होते हो सिर्फ तुम दोनों ही नहीं होते- एक महात्मा भी वहां अवश्य होगा- इस तरह तुम तीन होते हो। और अगर महात्मा मौजूद नहीं है तो परमात्मा तुम्हें यह सब करते हुए देख रहा है। लोगों के मन में परमात्मा की धारणा ऐसे ही है जैसे कोई शरारती लड़का हमेशा छेद में से झांक रहा है और तुम्हें देख रहा है। यह चित्त-वृत्ति चिंता पैदा करती है और जब चिंता है, तनाव है तो स्खलन शीघ्र ही हो जाएगा।
जब कोई चिंता नहीं, तब स्खलन घंटों रोका जा सकता है- यहां तक कि कई दिनों
तक भी रोका जा सकता है। और इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं है। अगर प्रेम गहरा है और दोनों शरीर एक दूसरे को शक्ति प्रदान कर सकते है, जब वीर्य स्खलन पूरी तरह रोका जा सकता है। दो प्रेमी एक दूसरे में वर्षों तक मिल सकते हैं, बिना स्खलन के, बिना शक्ति खोए। वे एक दूसरे के साथ विश्राम में हो सकते हैं। उनके शरीर मिलते हैं और शिथिल हो जाते हैं, एक दूसरे में प्रवेश करते ही शिथिल हो जाते हैं। और दरे-अबेर काम उत्तेजना नहीं रहती। अभी वह उत्तेजना है। तब वह उत्तेजना नहीं विश्रांति है, रिलैग्जेशन है; एक गहन समर्पण। अंग्रेजी में जिसके लिए सटीक शब्द है- "लेट गो"।

लेकिन यह तभी संभव है जब पहले तुमने स्वयं को इस प्राण-ऊर्जा को समर्पित
कर दिया है।
तंत्र कहता है, "यदि ऐसा घटित होता है और तंत्र इसका प्रबंध करता है कि कैसे यह घटित हो?" तंत्र कहता है, "जब तुम उत्तेजित हो, तब कभी संभोग मत करना।" यह बात बहुत असंगत प्रतीत होती है, क्योंकि तुम तभी संभोग करना चाहते हो जब तुम उत्तेजित हो। और दोनों साथी संभोग के लिए एक दूसरे को उत्तेजित करते हैं। लेकिन तंत्र कहता है, "उत्तेजना में तुम अपनी शक्ति का व्यर्थ व्यय करते हो।" तब प्रेम करो जब तुम शांत, गंभीर और ध्यान में हो। पहले ध्यान करो फिर प्रेम करो। और संभोग करते समय भी मर्यादा में रहो। मर्यादा से मेरा क्या अभिप्राय है?- सीमा के बाहर मत जाओ। उत्तेजित और हिंसात्मक मत होओ, ताकि तुम्हारी ऊर्जा बिखर न जाए।
अगर तुम व्यक्तियों को प्रेम करते देखो तो लगेगा कि वे लड़ रहे हैं। छोटे बच्चे, अगर कभी अपने माता पिता को प्रेम करते देखते हैं, तो वे सोचते हैं कि पिता मां की हत्या करने जा रहे हैं। यह बड़ा हिंसात्मक प्रतीत होता है, यह लड़ाई जैसा दिखाई देता है। यह निश्चय ही अधिक संगीतात्मक, लय बद्ध और हारमोनियस होना चाहिए। ऐसा प्रतीत होना चाहिए जैसे दोनों नृत्य कर रहे हैं, लड़ नहीं रहे- एक मधुर धुन गा रहे हैं, एक ऐसा वातावरण निर्मित कर रहे हैं जिसमें वे एक दूसरे में डूब सकें, विलीन हो सकें, एकाकार हो सकें। और फिर शांति हो जाएं। तंत्र का यही अर्थ है। तंत्र बिल्कुल कामुक नहीं। तंत्र का कामुकता से नहीं काम से संबंध है। और यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि प्रकृति अपने रहस्यो को इन्हीं शांत और विश्राम के क्षणों में तुम पर प्रकट करती है। तब तुम जो कुछ भी घट रहा है उसके प्रति होशपूर्ण होने लगते हो। इस होशपूर्ण अवस्था में कई रहस्यों का उदघाटन तुम्हारे मन में होने लगता है।
पहली बात, काम, सेक्स जीवनदायी हो जाता है। अभी तो जैसा है, मृत्युदायी है। इसके द्वारा तुम सिर्फ मुत्यु को ही प्राप्त हो रहे हो, स्वयं को व्यर्थ खो रहे हो। दूसरी बात, यह नैसर्गिक गहनतम ध्यान बन जाता है। तुम्हारे विचार पूर्ण रूप से रुक जाते हैं। जब तुम अपने प्रेमी के साथ पूरी तरफ विश्रांति में होते हो, तुम्हारे विचार रुक जाते हैं। बुद्धि वहां नहीं होती, केवल तुम्हारा हृदय धड़कता है। वह प्राकृतिक ध्यान बन जाता है। अगर प्रेम तुम्हें ध्यान में उतरने के लिए सहायक सिद्ध नहीं हो सकता तो कुछ भी सहायक सिद्ध न होगा, कयोंकि शेष सब सतही है, व्यर्थ है, अनावश्यक है। अगर प्रेम सहायता नहीं कर सकता तो और कुछ भी सहायता करने में समर्थ नहीं है।
प्रेम अपने में ध्यान है। लेकिन तुम्हें प्रेम का पता नहीं, तुम्हें केवल सेक्स का पता है। और तुम्हें ऊर्जा को व्यर्थ गंवाने की पीड़ा का पता है। और बाद में तुम एक खिन्नता, एक उदासी अनुभव करते हो। तब तुम ब्रह्मचर्य का व्रत लेने का निर्णय करते हो। यह व्रत तुम निराशा और उदासी के क्षणों में लेते हो, यह व्रत क्रोध में लेते हो, यह व्रत कुंठित मन से लेते हो। यह सहायक सिद्ध नहीं होगा।
यह व्रत तभी सहायक हो सकता है, अगर गहन विश्राम, और ध्यान की अवस्था में लिया जाए- नहीं तो तुम केवल अपने क्रोध, और कुंठा के सिवाय और कुछ भी प्रगट नहीं कर रहे। और तुम अपनी प्रतिज्ञा को चौबीस घंटे की भीतर ही भूल जाओगे। ऊर्जा फिर निर्मित हो जाएगी और फिर उसी पुरानी चर्चा के कारण तुम्हें इससे छुटकारा पाने के लिए विवश होना पड़ेगा।
इसलिए सेक्स तुम्हारे लिए एक छींक से ज्यादा नहीं है। तुम एक उत्तेजना अनुभव करते हो और छींक की भांति बाहर फेंककर राहत महसूस करते हो। नाम में जो थोड़ी खुजली तंग कर रही थी उससे छुटकारा पाने का सुख मिल गया। इसलिए काम केंद्र पर जो कुछ तंग कर रहा था उससे मुक्ति मिल गई।
तंत्र कहता है, "काम बहुत गहरा है, क्योंकि यह जीवन है।" लेकिन तुम गलत कारणों से इसमें रुचि रखेते हो। तंत्र में गलत कारणों से आकिर्षत मत होना, तब तंत्र तुम्हें खतरनाक नहीं प्रतीत होगा, तब तंत्र जीवन रूपांतरण होगा।

जिन विधियों की हम चर्चा कर रहे थे उनका योग में भी प्रयोग होता रहा है, लेकिन शत्रु-भाव से। तंत्र उन्हीं विधियों का प्रयोग करता है, लेकिन मित्र-भाव से, प्रेम-भाव से। इससे बहुत अंतर पड़ता है। विधि में गुणात्मक अंतर पड़ जाता है, क्योंकि पूरी पृष्ठभूमि ही बदल जाती है।
और तुमने पूछा हैः-
"तंत्र का केंद्रीय विषय क्या है?"
तुम! तुम ही तंत्र के केंद्रीय विषय हो। तुम जैसे अभी हो और जो तुम्हारे भीतर छिपा है वही तो विकसित हो सकता है, जो तुम हो और जो तुम हो सकते हो। अभी इस समय तुम काम की ही एक इकाई हो। और जब तक इकाई को गहराई से न समझ लिया जाए, तुम आध्यात्मिक इकाई नहीं हो सकते। कामुकता और आध्यात्मिकता एक ही ऊर्जा के दो छोर हैं।
"तंत्र" तुम जैसे हो वहीं से शुरू करता है, योग तुम हो सकते हो वहां से शुरू करता है। योग अंत के साथ शुरू करता है, तंत्र आरंभ के साथ शुरू करता है। और आरंभ के साथ शुरू करना अच्छा है, क्योंकि अगर अंत ही आरंभ है, तब तुम व्यर्थ अपने लिए दुख पैदा कर रहे हो। तुम केवल आदर्श ही नहीं हो। तुम्हें देवता होना है और अभी तुम सिर्फ पशु हो। और यह पशु देवता के आदर्श के कारण पागल हो जाता है।
तंत्र कहता है, "देवता को भूल जाओ।" अगर तुम पशु हो तो इस पशु को उसकी समग्रस्ता में समझो। उस समझ में ही देवता का जन्म होगा। और अगर उस समझ से भी देवता का जन्म न हो पाए, तो भूल जाओ इसे, उसका जन्म संभव ही नहीं है। आदर्श तुम्हारी संभावनाओं को प्रकट नहीं कर सकते, केवल वास्तविकता का ज्ञान ही तुम्हारी मदद कर सकता है। इसलिए तुम ही तंत्र का केंद्रीय विषय हो- जैसे तुम हो और जैसे हो सकते हो, तुम्हारी वास्तविकता और तुम्हारी संभावना। वे ही विषय-वस्तु हैं।
कभी-कभी लोग घबरा जाते हैं। अगर तुम तंत्र को समझने जाते हो, तो वहां न तो परमात्मा की चर्चा होती है न मोक्ष की, न निर्वाण की। तंत्र किस प्रकार का धर्म है? तंत्र उनकी चर्चा करता है जिनसे तुम्हें वितृष्णा होती है, तुम उनकी बात भी नहीं करना चाहते। कौन काम, सेक्स की चर्चा करना चाहता है? क्योंकि हर कोई सोचता है कि उसे सब पता है। क्योंकि तुम बच्चे को जन्म दे सकते हो, अतः समझते हो कि तुम जानते हो।
कोई भी काम की, सेक्स की चर्चा नहीं करना चाहता है, हालांकि काम सबकी समस्या है। कोई प्रेम की चर्चा नहीं करना चाहता क्योंकि हर कोई समझता है कि वह तो महान प्रेमी है ही। जरा अपने जीवन को देखो। तुम्हारा जीवन केवल घृणा है और घृणा के सिवाय कुछ नहीं है। और जिसे तुम प्रेम कहते हो वह थोड़ी सी चैन, थोड़ी
मैंने एक यहूदी गुरु बालशेम के बारे में सुना है, वह प्रतिदिन दरजी से अपना चोगा लेने के लिए जाता था, और दरजी ने उस फकीर का सीधा-सादा चोगा बनाने में छह महीने लगा दिए- बेचारा गरीब फकीर! चोगा तैयार हो गया और दरजी ने उसे बालशेम को दिया, बालशेम ने पूछा, "परमात्मा ने छह दिनों में सारे संसार की रचना कर दी और तुमने इस गरीब आदमी का चोगा तैयार करने में छह महीने लगा दिए?" बालशेम ने अपने संस्मरणों में उस दरजी का उल्लेख किया है। दरजी ने कहा, "यह ठीक है कि परमात्मा ने छह दिनों में संसार की सृष्टि की, लेकिन इसकी हालत तो देखो- किस तरह का संसार उसने बनाया है! हां, उसने छह दिनों में छह दिनों में संसार को बनाया, लेकिन इस संसार को तो देखो!"
अपने चारों ओर देख, जिस दुनिया को तुमने बनाया है उसे देखो। तब तुम्हें ज्ञात होगा कि तुम कुछ भी नहीं जानते। तुम सिर्फ अंधेरे में टटोल रहे हो। और क्योंकि सभी अंधेरे में हाथ-पांव मार रहे हैं, इसका अर्थ यह नहीं हो सकता कि तुम प्रकाश में जी रहे हो। क्योंकि दूसरे भी अंधेरे में भटक रहे हैं तुम्हें अच्छा लगता है। तुम्हारे सामने कोई तुलना नहीं।

लेकिन तुम अंधेरे में हो, तुम जहां हो, जैसे हो तंत्र तुम्हारे साथ वहीं
से शुरू करता है। तंत्र तुम्हें उन मूलभूत तथ्यों का बोध देना चाहता है, जिन्हें तुम अस्वीकार नहीं करते। या यदि तुम उन्हें अस्वीकार करने की चेष्टा करते हो, तो जिम्मेवारी तुम्हारी होगी। तुम्हें इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी।

दूसरा प्रश्नः काम-कृत्य को ध्यान का अनुभव कैसे बनाया जा सकता है? क्या संभोग करते समय किसी विशेष आसन के अभ्यास की आवश्यकता है?

आसन का कोई महत्त्व नहीं। आसन की बात ही असंगत है। असली बात तो चित्त की अवस्था है- शरीर की नहीं लेकिन यदि तुम अपने मन में परिवर्तन करते हो तो हो सकता है तुम आसन भी बदलना चाहो। ये दोनों एक दूसरे से जुड़ें हैं, लेकिन बुनियादी नहीं हैं।
उदाहरण के लिए, संभोग करते समय पुरुष हमेशा स्त्री के ऊपर होता है। यह अहंकारी व्यक्ति का आसन है। क्योंकि पुरुष हमेशा यह सोचता है कि वह स्त्री से अधिक योग्य है, उच्च है, श्रेष्ठ है, अतः वह स्त्री के नीचे कैसे हो सकता है? लेकिन पूरी दुनिया के आदिवासरी समाजों में स्त्री पुरुष के ऊपर लेटती है। इसलिए अफ्रीका में इसे मिशनरी पोस्चर, धर्मदूत का आसान कहते हैं- क्योंकि पहली बार जब ईसाई धर्म प्रचारक अफ्रीका पहुंचे, आदिवासी समझ हीन पाए कि "ये लोग क्या कर रहे हैं? ये औरत को मार ही डालेंगे।"
अफ्रीका में इसे मिशनरी पोस्चर कहते हैं। वहां के आदिवासी इसे हिंसात्मक मानते हैं- कि पुरुष स्त्री के ऊपर सवार हो। वह नाजुक और कमजोर है, उसे पुरुष के ऊपर होना चाहिए। लेकिन पुरुष के लिए ऐसा सोचना भी मुश्किल है कि वह स्त्री से नीचा है, और वह स्त्री के नीचे हो।
अगर तुम्हारी मनःस्थिति में कुछ परिवर्तन आता है तो बहुत कुछ बदल जाएगा। बहुत-से कारणों से यह उचित है कि स्त्री पुरुष के ऊपर हो। क्योंकि अगर स्त्री पुरुष के ऊपर है... वह निष्क्रिय है, वह अधिक हिंसात्मक नहीं हो सकती। वह केवल शिथिल होगी और उसके नीचे लेटा पुरुष कुछ ज्यादा नहीं कर सकता। यह अच्छी बात है। अगर वह ऊपर हो तो निश्चित ही हिंसात्मक हो जाएगा। वह करेगा कुछ ज्यादा और ज्यादा कुछ करने की तुम्हें जरूरत नहीं। तंत्र के लिए तुम्हें निश्चेष्ट और शिथिल होना पड़ेगा, इसलिए यह उचित है कि स्त्री ऊपर लेटी है। वह पुरुष से कहीं ज्यादा शांत और शिथिल हो सकती है क्योंकि वह स्वभाव से ही निष्क्रिय, पैसिव है।
आसन बदल जाएगा, लेकिन इसकी अधिक फिक्र मत करो। पहले अपनी चित्त-दशा को बदलो। जीवन-ऊर्जा के प्रति समर्पित हो जाओ, इसके साथ बहो। अगर कहीं सच में ही समर्पित हो गए तो तुम्हारे शरीर उस क्षण स्वतः ही उस अवस्था में आ जाएंगे जिसकी आवश्यकता है। अगर दोनों साथियों का समर्पण गहरा है, तब उनके शरीर ठीक उस आसन में आ जाएंगे जिसकी उस घड़ी जरूरत है।
और प्रतिदिन परिस्थितियां बदल जाती हैं, इसलिए पहले से ही इसको निर्धारित करने की जरूरत नहीं। यही भूल है कि तुम पहले से ही निश्चित करना चाहते हो। जब भी तुम कुछ पहले से निश्चित करना चाहते हो, तो स्मरण रहे यह निश्चय तुम्हारा मन ही करता है। इसका अर्थ हुआ कि तुम समर्पण नहीं कर रहे। अगर तुम समर्पण करते हो तो चीजों को अपने ढंग से घटने दो। और तब एक आश्चर्यजनक समस्वरता, हारमनी घटित होती है, जब दोनों साथी समर्पण कर देते हैं। वे कई आसन बदलेंगे या फिर वैसे ही पड़े रहेंगे शांत और शिथिल। लेकिन, यह सब बुद्धि द्वारा पहले से किए गए निश्चयों पर नहीं बल्कि जीवन-उर्जा पर निर्भर करता है। पहले कुछ भी निश्चित करने की जरूरत नहीं। यह निश्चय ही समस्या है।
प्रेम करने से पहले तुम सब तय कर लेना चाहते हो। प्रेम करने के लिए तुम पुस्तकें पढ़ते हो। ऐसी पुस्तकें भी हैं जो सिखाती हैं कि कैसे प्रेम किया

जाए। इससे यही स्पष्ट होता है कि हमने कैसी मानवीय बुद्धि का विकास किया है- कैसे प्रेम करे! तब प्रेम मस्तिष्क का विषय हो जाता है, तुम उसके विषय में सोचते हो, मन ही मन उसका रिहर्सल करते हो और फिर इसे कृत्य का रूप देते हो। वह कृत्रिम है, वास्तविक नहीं जब तुम रिहर्सल करते हो तो यह अभिनय हो जाता है, अप्रामाणिक हो जाता है।

बस, समर्पित हो जाओ और ऊर्जा के साथ-साथ बहो, और फिर वह तुम्हें कहीं भी
ले जाए। भय क्या है? भयभीत किस लिए होना? अपने प्रेमी के साथ भी यदि तुम निर्भय नहीं हो सकते, तब कहां, किसके साथ निर्भय हो सकोगे? और एक बार तुम्हें यह अनुभव हो जाए कि जीवन-उर्जा स्वतः ही सहायता करती है और उचित मार्ग, जो अपेक्षित है, पर ले जाती है, तब तुम्हें जीवन को देने की गहल अंतदृष्टि उपलब्ध होगीं। तब तुम अपना सारा जीवन परमात्मा पर छोड़ सकते हो। वह तुम्हार प्रियतम है।
तब तुम अपना सारा जीवन उस परम सत्ता के हाथों छोड़ सकते हो। तब तुम सोचते नहीं और योजनाएं नहीं बनाते, तुम भविष्य को बलपूर्वक अपने अनुसार बनाने की चेष्टा नहीं करते। तुम अपना जीवन उसकी मरजी पर छोड़ देते हो।
लेकिन काम-कृत्य (संभोग) को ध्यान कैसे बनाया जाए? समर्पण मात्र से ही ऐसा हो जाता है। उसके विषय में सोचो मत, उसे होने दो। तुम शांत और शिथिल पड़े रहो, और आगे कुछ मत करो। मन के साथ यही समस्या है। वह हमेशा आगे की सोचता है, हमेशा परिणाम की सोचता है और परिणाम भविष्य में है। इसलिए कृत्य में तुम स्वयं कभी उपस्थित नहीं होते। फलाकांक्षा के कारण तुम हमेशा भविष्य में होते हो। फल की आकांक्षा सब गड़बड़ कर देती, सब बिगाड़ देती है।
केवल कृत्य में ही रहो। भविष्य को भूल जाओ। वह आयेगा ही, उसकी चिंता करने
की जरूरत नहीं। चिंता करके तुम उसे ला नहीं सकते। वह आ ही रहा है, वह आ ही गया है। तुम उसकी चिंता मत करो। तुम बस, यहां और अभी "हेयर एंड नाओ" बने रहो। यहां और अभी होने के लिए काम एक गहरी अंतदृष्टि बन सकता है। मेरे देखे,
अब केवल यही एक कृत्य ऐसा बचा है जिसमें तुम यहीं और अभी हो सकते हो। अपने कालेज में जहां तुम शिक्षा ग्रहण कर रहे हो, यहीं और अभी नहीं हो सकते, इस आज की दुनिया में तुम कहीं भी यहां और अभी नहीं हो सकते।
लेकिन वहां भी तुम नहीं हो। तुम फल की चिंता कर रहे हो। और अब कई नई किताबों ने बहुत-सी उलझने पैदा कर दी हैं। क्योंकि अब तुम उन किताबों को पढ़ते हो जिनमें लिखा है कि प्रेम कैसे किया जाए और फिर तुम डरते हो कि प्रेम ठीक ढंग से कर रहे हो या गलत ढंग से। तुम किताब पढ़ते हो कि संभोग किस आसन में और कैसे किया जाए और फिर तुम चिंतित हो कि तुमने ठीक आसन बनाया या नहीं। मनोवैज्ञानिक ने मन के लिए नई चिंताएं पैदा कर दी हैं। अब वे कहते हैं कि पति इस बात का ख्याल रखे कि पत्नी कामसंवेग के शिखर तक पहुंच पा रही है या नहीं। इसलिए अब वह चिंतित है, "क्या मेरी पत्नी ऑरगॉज्म को प्राप्त कर रही है या नहीं?" और यह चिंता किसी प्रकार से कोई मदद नहीं कर सकती, बल्कि बाधा बन जाएगी।
और अब पत्नी चिंतित है कि क्या वह अपने पति को पूरी तरह रिलैक्स, होने में मदद कर रही है या नहीं? इसलिए उसके चेहरे पर प्रसन्नता और ओंठों पर मुस्कुराहट होनी ही चाहिए। उसे ऐसा प्रकट करना चाहिए कि वह बहुत ही आनंदित अनुभव कर रही है। सब झूठ हो जाता है। दोनों ही परिणाम की फिक्र कर रहे हैं और इस फिक्र के कारण वे फल कभी नहीं आएंगे।
सब भूल जाओ। उस क्षण में बहो और अपने शरीरों को जो भी करें, करने दो- तुम्हारे शरीर भली भांति जानते हैं, उनकी अपनी समझ है। तुम्हारे शरीर काम-कोशिकाओं सेक्स-सैलस से बने हैं। इनके भीतर सब कार्य पहले से निर्धारित हैं, तुमसे कुछ भी नहीं पूछा गया। बस, सब शरीर पर छोड़ दो; और शरीर हिलने-डुलने लगेगा। यह सब छोड़ देना, यह "लेट गो" स्वतः ध्यान बन जायेगा।

और अगर तुम संभोग में ध्यान का अनुभव पा सको, तो एक बात तुम्हें समझ आ जाएगी कि जब भी तुम समर्पण कर पाते हो, तुम्हें वही अनुभूति होती है। फिर तुम गुरु के आगे भी समर्पण कर सकोगे। वह प्रेम-संबंध है। तुम गुरु को समर्पित हो सकते हो, और तब उसके चरणों में सिर रखते समय तुम्हारा सिर खाली हो जाएगा, तुम विचार शून्य हो जाओगे। तुम ध्यानावस्था में होओगे।
फिर गुरु की भी जरूरत नहीं रहेगी- बाहर निकलकर तुम आकाश के प्रति समर्पित हो सकते हो- अब तुम समर्पण करना जानते हो, बस यही पर्याप्त है। तुम वृक्ष के आगे समर्पण कर सकते हो... और इसीलिए यह मूर्खतापूर्ण लगता है क्योंकि हम समर्पण करना नहीं जानते। हम किसी आदिवासी या ग्रामीण को देखते हैं, वह नदी पर जाता है, नदी को समर्पित होता है, उसे मां कहता है, देवी मां। या ऊगते सूर्य के प्रति समर्पण करता है और उसे महान देवता कहता है या पेड़ के पास जाता है सिर झुकाता है और समर्पित हो जाता है।
हमारे लिए वह अंधविश्वास है, तुम उसे कहते कि यह क्या मूर्खता कर रहे हो? पेड़ क्या कर सकता है? नदी क्या कर सकती है? और सूर्य क्या करेगा? देवी-देवता नहीं हैं। अगर तुम समर्पण कर सको तो कुछ भी देवता बन सकता है। अतः तुम्हारा समर्पण ही उसे दिव्य बना देता है। कुछ भी दिव्य नहीं है केवल तुम्हारा समर्पण करने वाला मन ही दिव्य बना देता है।
अपनी पत्नी के प्रति समर्पित हो जाओ और वह दिव्य हो जाती है; अपने पति के प्रति समर्पण करो, वह दिव्य हो जाता है। दिव्यता समर्पण के माध्यम से प्रकट होती है। पत्थर के प्रति समर्पण होते ही वह पत्थर नहीं रह जाता- पत्थर एक मूर्ति, एक सजीव मूर्ति हो जाता है।
इसलिए केवल यह जानना कि कैसे समर्पण करें... और जब मैं कहता हूं "कैसे समर्पण करे", मेरा अभिप्राय यह नहीं कि इसके लिए किसी विधि को जानो। मेरा मतलब है, तुम्हारे पास प्रेम में समर्पित होने की प्राकृतिक संभावना है।
समर्पित हो जाओ और इसे अनुभव करो। और तब अपने पूरे जीवन पर इसे छा जाने दो।